पंजीयन संख्या : 68939/98

ज्ञान तत्व

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

SEP 2025

अंक - 17

479

संगठन कितनी आवश्यकता कितनी मजबूरी 3

संगठनवाद एक बड़ी सामाजिक समस्या 5

उग्रवाद आतंकवाद और उसका भविष्य 7

प्रकाशन की तिथि - 15-09-2025 पोस्ट की तिथि - 1-10-2025

सिंहावलोकन

8 **एन0 जी0 ओ0: समस्या या समाधान**

13 **व्यक्तिगत अनुभव और संघ के साथ संबंध**

14 **वर्तमान दुनिया में विचारधाराओं का टकराव**

15 **विश्व राजनीति में ट्रम्प की चालें**

साथियों की कलम से -

17 **लोकतंत्र में न्याय और हिंसा: इतिहास से सबक**

19 **ज़ूम कार्यक्रम का सारांश**

पत्र व्यवहार का पता

बजरंग लाल अग्रवाल पोस्ट बाक्स 15, रायपुर (छ.ग.) 492021

website : margdarshak.info

प्रकाशक, संपादक व स्वामी - बजरंगलाल

9617079344

mail : Support@margdarshak.info

मुख्य कार्यालय-
ज्ञानयज्ञ परिवार आश्रम
रामानुजगंज छत्तीसगढ़ 497220
8318621282, 9630766001

लोक स्वराज अभियान
505 कृष्णा शिप्रा अजूरा अपार्टमेंट कौशांबी
गाजियाबाद 201012
9325683604, 9012432074

प्रधान संपादक
बजरंग लाल अग्रवाल
(बजरंग मुनि)

संपादक मण्डल
नरेन्द्र सिंह
विपिन तिवारी
विपुल आदर्श

सहयोगी संपादक
ज्ञानेन्द्र आर्य

सदस्यता नियमन
संजय गुप्ता 872669477
कुशल दुबे 7999934238

सज्जा
लाल बाबू रवि

वितरण एवं मुद्रण सहयोग
रबीन्द्र विश्वास

ज्ञान केन्द्र विचार, समन्वय और परिवर्तन के तीर्थ

संगठन कितनी आवश्यकता कितनी मजबूरी

बजरंग मुनि
प्रधान संपादक

सामान्यतया संगठन और संस्था को एक सरीखा ही मान लिया जाता है किन्तु दोनों बिल्कुल अलग-अलग होते हैं। संगठन को अंग्रेजी में ऑर्गेनाइजेशन कहते हैं और संस्था को इंस्टिट्यूशन, यद्यपि दोनों के अर्थ कभी-कभी मिला दिए जाते हैं। संगठन, संस्था से बिल्कुल भिन्न होता है। संगठन अधिकार प्रधान होता है, संस्था कर्तव्य प्रधान। संगठन अपने अधिकारों के लिये संघर्षरत रहता है जबकि संस्था ऐसे किसी संघर्ष से दूर रहती है। संगठन में आमतौर पर अपनत्व होता है। उसमें अपने जुड़े हुए लोग साथी तथा सहयोगी माने जाते हैं और संगठन से बाहर के लोग बाहरी। संस्था में ऐसा भेद नहीं होता बल्कि संस्था अपनों की अपेक्षा दूसरों को अधिक महत्व देती है। संगठन कभी सुरक्षा तक सीमित नहीं रहता, संस्था को सुरक्षा की ऐसी कोई चिंता नहीं रहती। संगठन मजबूतों के शोषण से बचने के लिये बनाया जाता है किन्तु बाद में संगठन कमजोरों का शोषण करने लगता है। संस्था कभी कमजोरों का शोषण करती ही नहीं है बल्कि कमजोरों को शोषण से बचाने में सहायता करती है। संगठन में शक्ति होती है। जो लोग संगठित होते हैं वे असंगठितों की तुलना में कई गुना अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं। संगठन में शक्ति केन्द्रित होती है। संस्थाओं में शक्ति अकेन्द्रित होती है। संस्थाएं सेवा कार्य में लगी होती हैं और कभी भी शक्ति संग्रह का प्रयास नहीं करतीं। संगठन अपने संगठन के हित में नैतिकता की परिभाषा भी बदलते रहता है। वह दूसरों से कर्तव्य की अपेक्षा करता है और उन्हें नैतिकता की सलाह देता है किन्तु स्वयं कभी कर्तव्य की चिंता नहीं करता। संगठन का शक्तिशाली होना ही उसकी नैतिकता की परिभाषा होती है। संगठन प्रचार माध्यमों का भरपूर उपयोग करता है। आमतौर पर वह इसके लिये छल कपट का भी सहारा लेता है। संस्थाएं प्रचार माध्यमों से दूर रहती हैं। वे प्रचार के लिये कभी छल कपट का सहारा लेती ही नहीं। संगठन की सोच बहुत संकीर्ण होती है और संस्थाओं की व्यापक। संगठन दूसरे संगठनों से प्रतिस्पर्धा करते हैं किन्तु संस्थाएं अन्य संस्थाओं की सहायता करती हैं क्योंकि संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य सेवा होता है तो संगठनों का संग्रह।

दुनिया में कई प्रकार के संगठन भी बने हुए और संस्थाएं भी हैं। राजनीतिक, सरकारी कर्मचारियों के, किसानों और व्यापारियों के, महिला और पुरुष के, युवक वृद्धों के तथा अन्य अनेक आधार पर संगठन बने हुए हैं। ये संगठन दिन-रात समाज में टकराव और अव्यवस्था फैलाते रहते हैं। यदि हम और स्पष्ट विचार करें तो दुनिया में धर्म के नाम पर इस्लाम और राजनीति के नाम पर साम्यवाद पूरी तरह वैचारिक धरातल पर भी संगठन है और क्रियात्मक रूप में भी। संघ परिवार और सिख समुदाय भी ऐसे ही संगठन माने जाते हैं। रेड क्रॉस सोसायटी संस्थाओं के रूप में बहुत विख्यात है। किन्तु इन सब से हटकर गायत्री परिवार, आर्य समाज, सर्वोदय जैसे कहे जाने वाले समूह संस्था माने जाते हैं, संगठन नहीं। इस्लाम, संघ, साम्यवाद, सिख तथा गायत्री परिवार, आर्य समाज, सर्वोदय आदि की कार्यप्रणाली और परिणाम ठीक से देखने पर संगठन और संस्था का अंतर साफ पता चल जाता है।

मुसलमानों और सिखों में भी कुछ सामाजिक संस्थाएं

हैं, यद्यपि हिंदुओं की तुलना में कम हैं। धीरे-धीरे भारत में संस्थाएं कम हो रही हैं और संगठन बढ़ रहे हैं। संगठनों का जितना ही विस्तार हो रहा है उतना ही अधिक समाज में टकराव बढ़ रहा है और उसी गति से अव्यवस्था भी बढ़ रही है। राजनीतिक दल तो लगभग पूरी तरह संगठन का रूप ले चुके हैं। राजनीतिक दल अप्रत्यक्ष रूप से व्यावसायिक संगठन तो हैं ही किन्तु धीरे-धीरे आंशिक रूप से अब आपराधिक संगठन सरीखा सा भी होते जा रहे हैं। आदर्श स्थिति में राजनीतिक कार्य संस्थागत अधिक और संगठनात्मक कम माना जाता है किन्तु वर्तमान समय में राजनीति में संस्थागत नैतिकता लगभग शून्य हो गई है और संगठनात्मक दुर्गुण हावी हो गए हैं।

जब आम लोगों को व्यवस्था से न्याय मिलने की पूरी उम्मीद रहती है तब संगठन नहीं बनते। यदि बनते हैं तो उन संगठनों को समाज में कोई सम्मान नहीं मिलता। किन्तु जब समाज में अव्यवस्था फैल जाती है, न्याय मिलना अनिश्चित हो जाता है तब हर व्यक्ति सुरक्षा के लिये किसी न किसी प्रकार से संगठित होने का प्रयास करता है। इसका अर्थ हुआ कि सभी अपराधियों के विरुद्ध सारे शरीफ लोगों को संगठित हो जाना चाहिये। यदि उसके बाद भी कोई खतरा हो तब सरकार को सक्रिय होकर न्याय और सुरक्षा की गारंटी देनी चाहिये। किन्तु जब प्रवृत्ति का आधार छोड़कर अन्य आधारों पर संगठन बनने लगे तथा सरकार भी न्याय और सुरक्षा की जगह अन्य संगठनों को मान्यता और प्रोत्साहन देने लगे तब अव्यवस्था फैलती है। जब समाज में अव्यवस्था फैलती है तब धूर्त या अपराधी स्वभाव के लोग प्रवृत्ति के आधार के विपरीत अन्य आधारों पर संगठित होना शुरू कर देते हैं। जब सारा कार्य सरकार अपने पास संभाल लेती है और सरकार में व्यवस्था टूटकर भ्रष्टाचार में बदल जाती है तब नये-नये संगठन सामने आकर उस भ्रष्टाचार या अव्यवस्था का लाभ उठाना शुरू कर देते हैं। यदि मेरे घर में सांप के घुसने की कोई संभावना न हो अथवा मैं अनिश्चित रहूं कि सांप घुसेगा तो व्यवस्था के द्वारा मेरी सुरक्षा अनिश्चित है तब मैं अपने घर में डंडा नहीं रखूंगा। असुरक्षा होने पर या सांप के घुसने पर मैं सतर्क भी रहूंगा या डंडा रखूंगा।

जब समाज में अपराधियों की बाढ़ आयी हुई हो और सुरक्षा का दायित्व संभाल रही सरकार जनकल्याण के आलतू-फालतू कार्यों में व्यस्त हो तब स्वाभाविक है कि हर व्यक्ति अपनी सुरक्षा की स्वयं चिंता करे। ऐसी स्थिति में सुरक्षा के नाम पर संगठन बन जाते हैं और ऐसे संगठन बाद में कमजोरों का या असंगठितों का शोषण करते हैं। मैंने तो कई बार यह देखा है कि अनेक शरीफ लोग अपनी सुरक्षा के लिये अलग - अलग तरह के आपराधिक गिरोहों के साथ भी समझौता करने को बाध्य होते हैं। ऐसे लोग एक तरफ तो सरकार को टैक्स देते ही हैं दूसरी ओर संगठित गिरोह को भी टैक्स देने के लिये मजबूर रहते हैं। भारत में अब भी हिंदू का बहुमत धार्मिक आधार पर संगठित नहीं होना चाहता किन्तु जिस तरह स्वतंत्रता के बाद भारतीय राजनीति ने अल्पसंख्यक तुष्टिकरण को बढ़ावा दिया उससे हिंदुओं के संस्थागत चरित्र को भी संगठित होने की मजबूरी दिखी। नरेंद्र मोदी का निर्वाचन ऐसी ही मजबूरी माना जा सकता है। सरकार का काम असुरक्षितों की सुरक्षा करना होता है। यदि सरकार अपना काम ठीक से करे तो संगठन बनेंगे ही नहीं किन्तु सरकार अपना काम छोड़कर एक ओर तो जुआ, शराब, वैश्यावृत्ति और तंबाकू रोकने में लग गई तो दूसरी ओर उसने संगठनों को मान्यता भी दे दी। परिणाम हुआ कि भारत में कुकरमुत्तों की तरह गांव-गांव में संगठन बन गए। हर क्षेत्र में किसी भी आधार पर अलग-अलग प्रकार के संगठन बनने लगे और सरकारें ऐसे संगठनों को मान्यता देकर प्रोत्साहित करने लगीं। यहां तक कि सरकार संगठितों को संगठित होने की सलाह भी देने लगी। कितनी बेशर्म सलाह है कि हमारी सरकार महिलाओं को कराटे की ट्रेनिंग देती है या नागरिकों को शस्त्र का लाइसेंस देती है। सुरक्षा देना उसका काम है तो वह काम नहीं करती और सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिये अनावश्यक हस्तक्षेप करती रहती है जो उसका काम नहीं है। दहेज प्रथा सरकार दूर करती है और अपनी शारीरिक सुरक्षा के लिये महिला को टकराव के लिये प्रेरित करती है। यह समझ में नहीं आता। मेरी यह मान्यता है कि सारी समस्याओं की जड़ मुख्य रूप से राजनीतिक व्यवस्था में है जो संस्थाओं को निरुत्साहित और संगठनवाद को प्रोत्साहित करती है। यदि सरकार जनहित के काम छोड़कर सुरक्षा देने में सक्रिय हो जाये तो संगठनों की बाढ़ रुक सकती है। फिर भी मैं यह चाहता हूँ कि हम आप संगठनवाद को प्रोत्साहित न करें। यदि संगठन बनाना हो तो अन्य सब प्रकार के भेदभाव समाप्त करके प्रवृत्ति के आधार पर अर्थात अपराधियों के विरुद्ध शेष लोगों का एक संगठन बने। अन्य सारे संगठन समाप्त कर दिये जाएं चाहे किसी आधार पर क्यों न बने हों। संस्थागत चरित्र को प्रोत्साहित किया जाये। साथ ही राजनीति को इस दिशा में मजबूर किया जाये कि वह आम लोगों को संगठित होने की मजबूरी से बचा सके अर्थात सुरक्षा और न्याय सबको दे और किसी प्रकार के बने हुए वर्तमान संगठन को सरकारी मान्यता समाप्त कर दे। संगठन बनाना किसी भी परिस्थिति में अल्पकालिक मजबूरी हो सकती है किन्तु दीर्घकालिक सिद्धांत नहीं हो सकती। इसलिए हमें दीर्घकालिक समाधान की दिशा में प्रयत्नशील रहना चाहिये।

संस्था और संगठन में बहुत अंतर होता है। संस्था कर्तव्य प्रधान होती है तो संगठन अधिकार प्रधान। संस्था व्यवस्था के लिये सहायक होती है तो संगठन बाधक। जब व्यवस्था तानाशाही की हो और समाज गुलाम सरीखा हो तब गुलामी से मुक्ति के लिये संगठन बनाना और संघर्ष करना उचित माना जाता है, किन्तु जब व्यवस्था लोकतांत्रिक हो तब संगठन बनाना हमेशा घातक होता है। संस्था और संगठन की कार्यप्रणाली भी अलग-अलग होती है। संगठन कानून तोड़ने को प्रोत्साहित करते हैं तो संस्थाएं कानूनों में सुधार अथवा बदलाव के लिये व्यवस्था से निवेदन करती हैं। संस्थाएं बदलाव के लिये जनजागरण करती हैं तो संगठन जन आक्रोश का सहारा लेते हैं। संगठन संस्थागत कार्यों में भी सक्रिय रहते हैं तो संस्थाएं कभी संगठनात्मक कार्य नहीं करतीं। संगठन मजबूतों से सुरक्षा के लिये बनते हैं और बाद में कमजोरों का शोषण करने लगते हैं। संस्थाएं मजबूतों की मदद से बनती हैं और कमजोरों की सहायता करती हैं।

प्रवृत्ति के आधार पर दो ही प्रकार के संगठन बनाये जा सकते हैं। एक सामाजिक लोगों का और दूसरा समाज विरोधी तत्वों का। इसके अतिरिक्त किसी अन्य आधार पर कोई संगठन बनता है तो हमेशा सामाजिक आधार पर बने संगठनों को कमजोर करता है क्योंकि समाज विरोधी तत्व ऐसे संगठनों से सहायता प्राप्त करने लगते हैं अथवा उन्हें ऐसे संगठनों में छिपने के लिये जगह मिल जाती है। व्यवस्था की दृष्टि से ही कुछ स्वाभाविक संगठन भी बनते हैं जिन्हें हम परिवार, गांव, क्षेत्र, प्रदेश और देश के नाम से पुकारते हैं। ये संगठन नीचे से लेकर ऊपर तक एक-दूसरे के सहायक होते हैं, टकराते नहीं। इनका उद्देश्य समाज व्यवस्था को मजबूत करना होता है, कमजोर करना नहीं। धर्म, जाति अथवा किसी अन्य आधार पर यदि कोई संस्था बनती है तो वह भी समाज व्यवस्था के लिये सहायक होती है, किन्तु यदि धर्म, जाति, भाषा, गरीब-अमीर, श्रमजीवी-बुद्धिजीवी महिला-पुरुष अथवा किसी भी अन्य आधार पर कोई संगठन बनता है,... तो वह संगठन हर प्रकार की सामाजिक व्यवस्था को नुकसान ही पहुँचाता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है। जब कोई व्यक्ति कोई संगठन बनाकर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर सक्रियता दिखाता है तब वह सक्रियता उसकी मौलिक अधिकार नहीं होती। वह सक्रियता उसकी संवैधानिक अधिकार हो सकती है। दुर्भाग्य से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर हड़ताल, चक्का जाम, विरोध प्रदर्शन आदि घातक कार्य किये जाते हैं। सच्चाई यह है कि जब व्यक्ति किसी के साथ जुड़कर संगठन बन जाता है तब उसके मौलिक अधिकार नहीं होते, सिर्फ संवैधानिक अधिकार होते हैं क्योंकि मौलिक अधिकार सिर्फ व्यक्ति के व्यक्तिगत होते हैं, सामूहिक नहीं। कोई भी संगठन चाहे वह कहीं भी बना हो और किसी भी परिस्थिति में बना हो यदि स्वतंत्रता संघर्ष के अतिरिक्त किसी और परिस्थिति में बनता है तो वह सामाजिक समस्या है, समाधान नहीं, क्योंकि संगठन हमेशा व्यवस्था पर दबाव बनाते हैं और उसे ब्लैकमेल करते हैं। इसका परिणाम होता है असंगठितों का शोषण।

मैंने तो आज तक एक भी ऐसा संगठन नहीं देखा जो मार्ग शुद्धिकरण के विषय में भी कुछ सोचता हो। मैंने तो देखा है कि संगठन "संगे शक्ति कलियुगे" का गर्व से नारा लगाते हैं। संगठन से जुड़े लोग अपने को शेर प्रवृत्ति का मानने पर गर्व अनुभव करते हैं और गाय प्रवृत्ति को हीन भाव से देखते हैं। जो हिंदू गाय की पूजा करना अपना सर्वश्रेष्ठ कर्तव्य मानते हैं, वे भी जब संगठन के साथ जुड़ते हैं तब शेर के समान शक्तिशाली होना अच्छा मानते हैं। संगठनों के आपसी टकराव के कारण समाज में निरंतर हिंसा का विस्तार हो रहा है क्योंकि संगठन अपने विस्तार के लिये उचित या अनुचित मार्ग में कोई अंतर नहीं देखते।

वर्तमान समय में दुनिया में विचारकों का अभाव हो रहा है। उसका मुख्य कारण समाज में बढ़ता हुआ संगठनों का जाल है। जब भी कोई बालक प्रबुद्ध दिखने लगता है तो विभिन्न संगठन उसे अपने साथ जोड़ने के लिये सारी ताकत लगा देते हैं। धीरे-धीरे उसका ब्रेनवॉश कर दिया जाता है

और या तो वह साम्यवादियों के विचारों से ओत-प्रोत हो जाता है अथवा संघ विचारों से जुड़ जाता है। उसकी स्वतंत्र चिंतन की दिशा समाप्त हो जाती है। वह कभी स्वतंत्र विचार नहीं कर पाता। संगठन कभी विचारों के आधार पर नहीं बढ़ते, संबंधों के आधार पर बढ़ाये जाते हैं। संगठन में तर्क या विचार मंथन पर पूरा प्रतिबंध होता है। संगठन भाईचारा, प्रेम, सेवा, सद्भाव और त्याग-भावना को आधार बनाकर अपना विस्तार करते हैं।

संगठनों में गिने-चुने चालाक व धूर्त लोग होते हैं जो निर्णायक स्थिति में होते हैं, अन्य सभी भावना प्रधान लोग उनके पीछे-पीछे भेड़-बकरी के समान चलते जाते हैं। संगठन में इतनी अधिक शक्ति बढ़ जाती है कि संगठन असंगठित लोगों की तुलना में कई गुना तेज गति से आगे बढ़ता है। संगठन में सफलता अधिक तेजी से मिलती है।

हम भारत की वर्तमान स्थिति की समीक्षा करें तो भारत में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रकार के संगठन बन गये हैं। हम देख रहे हैं कि दुनिया में इस्लाम बहुत तेज गति से आगे बढ़ रहा है क्योंकि इस्लाम पूरी तरह एक संगठन है जिसे धर्म कह दिया जाता है। इस्लाम में कोई भी संस्थागत लक्षण नहीं हैं। यही कारण है कि इस्लाम दुनिया में तेजी से बढ़ रहा है। भारत में भी इस्लाम अपनी संगठनात्मक शक्ति के बल पर निरंतर बढ़ रहा है। साम्यवाद भी संगठन शक्ति के बल पर ही दुनिया में आगे बढ़ा, भले ही अब वह अन्य संगठनों के समक्ष कमजोर पड़ रहा है। भारत में संघ ने भी इस्लाम और साम्यवाद की सफलता को देखते हुए संगठन का मार्ग अपनाया। परिणामस्वरूप संघ भी एक मजबूत संगठन के रूप में स्थापित हो गया।

राजनीतिक क्षेत्र में भी जो राजनीतिक दल होते हैं उनका स्वरूप पूरी तरह संगठनात्मक ही होता है, संस्थागत नहीं होता। इसी तरह भारत में अन्य सभी क्षेत्रों में संगठन बनाने की एक होड़ मची हुई है। हर धूर्त किसी न किसी नाम पर संगठन खड़ा करना चाहता है जिसके बल पर वह असंगठितों का सफलतापूर्वक शोषण कर सके तथा व्यवस्था को ब्लैकमेल कर सके। जातीय संगठन, कर्मचारी संगठन अथवा अन्य संगठनों ने भारत की आंतरिक व्यवस्था को अव्यवस्था में बदल दिया है। अब तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी सुरक्षा के लिये किसी न किसी संगठन से जुड़ना चाहता है क्योंकि उसे राजनीतिक व्यवस्था से सुरक्षा का भरोसा नहीं दिखता और बिना किसी संगठन के सहारे वह अपना भविष्य उज्ज्वल नहीं देखता।

हम जब देश में चारों ओर आंख उठाकर देखते हैं तो ऐसा व्यक्ति जल्दी से नहीं मिलता जिस पर हम यह विश्वास कर सकें कि यह व्यक्ति सत्य ही बोलता होगा, निष्पक्ष होगा, किसी संगठन में जुड़ा नहीं होगा। कई लोग तो ऐसे भी मिलते हैं जो कई-कई संगठनों से जुड़े होते हैं। संगठनों के आपसी टकराव में भारत का अपना मौलिक चरित्र गिर रहा है। लोकतंत्र भी अविश्वसनीय हो गया है और सबसे बड़ा नुकसान यह हो रहा है कि भारत विचारों के मामलों में कंगाल हो गया है। वैचारिक धरातल पर हम पूरी तरह दुनिया के अनेक देशों की नकल करने के लिये मजबूर हैं क्योंकि जब हर आदमी किसी न किसी संगठन से जुड़ रहा है तब भारत में विचारक कहां से निकलेंगे।

यदि कोई व्यक्ति स्वतंत्र चिंतन करना शुरू करता है तो अलग-अलग संगठनों के लोग उसे शत्रु के समान कमजोर करने का प्रयास करते हैं। गांधी एक स्वतंत्र विचारक थे। हम गांधी की मृत्यु के बाद गांधी के स्तर का कोई विचारक सामने नहीं ला सके बल्कि यहां तक हुआ कि संगठनों ने गांधी को ही अप्रासंगिक घोषित कर दिया है। यदि हम तीन संगठनों का आकलन करें तो मुसलमान, साम्यवादी और संघ परिवार गांधी की आलोचना करने में एक साथ हो जाते हैं, भले ही आपस में कितना भी क्यों न कटते-मरते हों, क्योंकि हर संगठन किसी भी स्वतंत्र विचार को अपने लिये घातक मानता है और विचारक को शत्रु।

संगठनवाद सारी दुनिया के लिये एक बड़ी समस्या है। भारत तो संगठनवाद में बुरी तरह लहूलुहान है। संगठनवाद का विरोध बहुत कठिन भी और खतरनाक भी। गांधी का परिणाम हम देख चुके हैं कि उन्होंने संगठनों से हटकर नई दिशा पर चलने का प्रयास किया तो परिणाम दुःखद हुआ। फिर भी यह प्रश्न अवश्य खड़ा होता है कि जब देश की स्वतंत्रता के लिये अनेक लोग फांसी पर चढ़े, स्वेच्छा से गोली खा गये, स्वेच्छा से जेलों में रह गये तो हम स्वतंत्र भारत में वर्तमान संगठनवाद से डरकर आगे आने का प्रयास क्यों न करें। संगठनवाद एक समस्या है और समाधान के लिये किसी न किसी को तो आगे आना ही होगा। फिर वह पहल हम क्यों न करें। जिन देशों में लोकतंत्र नहीं है वहां संगठनों की आवश्यकता पर विचार किया जा सकता है, किन्तु जहां लोकतंत्र है वहां संगठनों का औचित्य क्या? राजनीति समाज को हमेशा विभाजित करके रखना चाहती है, इसलिये वह संगठनों को प्रोत्साहित करती है। भारत एक लोकतांत्रिक देश है। भारत में संगठन बनाना असामाजिक कार्य माना जाना चाहिये। सरकार माने या न माने यह उसका काम है, लेकिन समाज को तो इस दिशा में सोचना ही चाहिये। आज भारत में जो अव्यवस्था और हिंसा का वातावरण दिख रहा है उसका प्रमुख कारण संगठनवाद के प्रति बढ़ता आकर्षण है। मैं चाहता हूँ कि हम आप मिलकर समाज को इन परिस्थितियों से अवगत करावें और प्रयास करें कि संगठनवाद से मुक्ति के लिये कोई एक नई राह निकल सके।

उग्रवाद आतंकवाद और उसका भविष्य

कुछ सर्वस्वीकृत मान्यतायें हैं।

1. उग्रवाद मुख्य रूप से विचार तक सीमित होता है और आतंकवाद क्रिया में बदल जाता है। आतंकवाद को कभी संतुष्ट या सहमत नहीं किया जा सकता। सिर्फ कुचलना ही उसका एकमात्र समाधान है।

2. किसी भी प्रकार की तानाशाही व्यवस्था में उग्रवाद या आतंकवाद कभी नहीं बढ़ता। लोकतांत्रिक व्यवस्था में ही उग्रवाद आतंकवाद बढ़ता है।

3. तानाशाही से मुक्ति के लिये उग्रवाद या आतंकवाद का समर्थन भी हो सकता है किन्तु लोकतंत्र में किसी भी प्रकार के उग्रवाद का समर्थन नहीं किया जा सकता। आतंकवाद के समर्थन का तो कोई प्रश्न ही नहीं है।

4. वर्तमान समय में भारत के अधिकांश गांधीवादी किसी न किसी रूप में इस्लामिक या वामपंथी उग्रवाद और आतंकवाद का अप्रत्यक्ष समर्थन करते हैं।

सृष्टि के प्रारंभ से ही सफलता में शक्ति की भूमिका निर्णायक रही है। जो व्यक्ति जितना ही अधिक शक्तिशाली होता था वह उतना ही अधिक फायदे में रहता था। बाद में व्यक्तिगत शक्ति संगठित शक्ति में बदल गई और समूह की ताकत के बल पर राज्य बनने और बिगड़ने लगे। धीरे-धीरे यह भी स्थिति बदली और अब तो अस्त्र-शस्त्र ही वास्तविक शक्ति के आधार बन गये हैं। प्राचीन समय में शक्ति का प्रयोग या तो राज्य के लिये था या व्यक्तिगत। धर्म के लिये बल प्रयोग बहुत कम देखने को मिलता था क्योंकि प्राचीन समय में धर्म की परिभाषा संगठन न होकर आचरण से जुड़ी थी। धर्म के साथ हिंसा को सर्वप्रथम जोड़ा इस्लामिक कट्टरपंथियों ने। उन्होंने राजनीति को धर्म के साथ मिला लिया और विस्तार के लिये आंशिक हिंसा को आधार मान लिया। स्वाभाविक ही था कि इस्लाम को अपने द्रुत विस्तार में उसका लाभ मिला। दुनिया में जितनी तीव्र गति से इस्लाम का विस्तार हुआ उतना और किसी धर्म का नहीं हुआ। धार्मिक हिन्दू तो बेचारे इस दौड़ में रहे ही नहीं क्योंकि हिन्दुओं ने कभी धर्म, राजनीति और हिंसा को एक साथ जोड़कर देखा ही नहीं।

हिंसा की उपयोगिता को इस्लाम के बाद ठीक से समझा साम्यवाद ने। इन्होंने धर्म, राजनीति और हिंसा को एक साथ न मिलाकर गरीबी, राजनीति और हिंसा को एक साथ मिला लिया। स्वाभाविक ही था कि हिंसा और द्वेष की बैसाखी पर सवार होकर साम्यवाद भी बहुत फला-फूला। साम्यवाद ने भी बहुत कम समय में जितनी प्रगति की वह अभूतपूर्व और आश्चर्यजनक थी। साम्यवाद ने अर्ध तानाशाही का मार्ग चुना और प्रजातंत्र के साथ डटकर मुकाबला किया। एक बार तो ऐसा लगने लगा था कि पूरी दुनिया में लोकतंत्र के स्थान पर साम्यवाद ही साम्यवाद छा जायेगा। भले ही बाद में वे सपने बिखर गये यह अलग बात है किन्तु बल प्रयोग ने साम्यवाद के नाम पर दुनिया में स्वयं को स्थापित तो कर ही लिया था। ऐसे ही समय में भारत में बल प्रयोग की महत्ता को समझा आर.एस.एस. अर्थात् संघ ने। उसने महसूस किया कि धर्म, राजनीति और हिंसा को मिलाकर यदि इस्लाम दुनिया में इतने पैर फैला सकता है तो हिन्दू भारत में क्यों नहीं सफल हो सकता।

हिन्दुत्व के पास भारत में संख्या बल है। समृद्ध विज्ञान है, उज्ज्वल भूतकाल का इतिहास है। उनके पास इस्लामिक उग्रवाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया का भी अच्छा अवसर उपलब्ध है। इस्लाम के पास तो यह सब नहीं। फिर हमें प्रगति करने में क्या बाधा है। स्वाभाविक ही था कि संघ भी बहुत तेज गति से बढ़ा। बहुत कम समय में ही संघ एक राजनैतिक ताकत बन गया। अपने महत्वपूर्ण विस्तार काल में ही यदि संघ और गांधी हत्या कांड एक साथ नहीं जोड़े गये होते तो संघ का विस्तार किसी के रोकने से रुकने वाला नहीं था किन्तु एक अप्रत्याशित घटना ने संघ को बहुत नुकसान किया। फिर भी संघ ने धीरे-धीरे स्वयं को पुनः स्थापित कर लिया और तीन-चार वर्ष से तो स्पष्ट असर दिखने लगे कि संघ भारतीय राजनीति में निर्णायक बढ़त प्राप्त कर चुका है। इस तरह दुनिया में शक्ति के बल पर इस्लाम और साम्यवाद ने स्वयं को स्थापित कर लिया और भारत में संघ ने। कोई भी व्यक्ति जब किसी दूसरे की गलती को रोकने के लिये बल प्रयोग करना उचित मानने और करने लगता तब ऐसे बल प्रयोग का औचित्य उग्रवाद में बदलने लगता है। जब तक बल प्रयोग व्यक्तिगत स्वार्थ तक सीमित रहता है, तब तक ऐसे समूह को आपराधिक गिरोह तक सीमित माना जाता है किन्तु जब ऐसा बल प्रयोग किसी सिद्धान्त के आधार पर होता है तब वह अपराध न होकर उग्रवाद बन जाता है। हिंसा का औचित्य संगठित होकर उग्रवाद और अनियंत्रित होकर आतंकवाद बन जाता है।

उग्रवाद में आमतौर पर विचार-प्रसार अधिक होता है और हिंसात्मक सक्रियता कम, किन्तु आतंकवाद में विचार-प्रचार न होकर सक्रिय हिंसा ही लक्ष्य बन जाती है। तानाशाह देश में उग्रवाद या आतंकवाद न के बराबर होता है, किन्तु तानाशाह देश अपने पड़ोसी देश में हमेशा ही आतंकवाद को प्रश्रय दिया करते हैं। इसलिये यदि किसी देश में तानाशाही है तो तानाशाही से मुक्ति के लिये उग्रवाद या आतंकवाद को एक मार्ग के रूप में माना जा सकता है। किन्तु यदि किसी देश में लोकतंत्र है तो किसी लोकतांत्रिक देश में किसी व्यक्ति को किसी व्यक्ति के विरुद्ध बल प्रयोग ही अपराध है। उग्रवाद या आतंकवाद का तो किसी भी स्वरूप में औचित्य होता ही नहीं। यदि किसी लोकतांत्रिक देश में राज्य से भिन्न किसी बल प्रयोग का किसी भी रूप में औचित्य सिद्ध करने की बात होती है तो वह सीधा-सीधा उग्रवाद है और ऐसी बात का विरोध किया जाना चाहिये।

एन जी ओः समस्या या समाधान

कुछ सर्वस्वीकृत सिद्धांत हैं–

1. राज्य एक आवश्यक बुराई माना जाता है। राज्यविहीन समाज व्यवस्था यूटोपिया होती है और राज्य नियंत्रित समाज व्यवस्था गुलामी। राज्ययुक्त किन्तु राज्य मुक्त समाज व्यवस्था आदर्श मानी जाती है।

2. अपराधी और राजनीतिज्ञ बहुत मायावी होते हैं। जहाँ भी लाभ या प्रतिष्ठा के अधिक अवसर देखते हैं, वहीं ये वेश बदलकर उस भीड़ का नेतृत्व करने लगते हैं।

3. यदि समाज सेवी संस्थाओं या संगठनों में भ्रष्टाचार दो प्रतिशत से अधिक हो जाये तो उनका तत्काल निजीकरण कर देना चाहिए।

4. अधिकांश भ्रष्ट लोग निजीकरण का सबसे अधिक विरोध करते हैं।

मुझे एन जी ओ का पुराना इतिहास पता नहीं है। मुझे यह भी पता नहीं है कि एन जी ओ कब संस्था के रूप में था और कब से संगठन बना। किन्तु मुझे यह पता है कि प्राचीन समय में एन जी ओ स्वयं सेवी संस्था के रूप में कार्य करता था और आज गैर सरकारी संगठन के रूप में। प्राचीन समय में संस्थाओं पर समाज का नियंत्रण होता था, किन्तु आज इन पर सरकार की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। भारत में एन जी ओ हमेशा संस्था के रूप में रही, किन्तु पश्चिम के प्रभाव में उसका स्वरूप संगठन के रूप में बन गया। संस्थाएँ सिर्फ समाज सेवा का काम करती थीं, समाज पर नियंत्रण करने का नहीं, किन्तु एन जी ओ सरकार और समाज के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाने लगे।

राज्य हमेशा ही समाज पर अपना अधिकतम हस्तक्षेप बनाये रखना चाहता है। लोकतंत्र उस हस्तक्षेप में आंशिक रूप से बाधक रहा, किन्तु जब दुनिया में साम्यवाद मजबूत होने लगा तब से लोकतंत्र के समक्ष भी संकट पैदा हुआ। साम्यवाद सम्पूर्ण सरकारीकरण की व्यवस्था थी और सफलतापूर्वक आगे बढ़ रही थी। दूसरी ओर गैर सरकारी संस्थाएँ पूरी तरह सरकार मुक्त व्यवस्था थीं और सरकार के लिए समस्या भी। कुछ लोकतांत्रिक देशों ने साम्यवाद और लोकतंत्र के बीच एन जी ओ को एक मध्यमार्ग चुना। एन जी ओ के माध्यम से सरकारें सामाजिक कार्यों के लिए धन देने लगीं। स्पष्ट है कि सरकारों द्वारा बनायी गई अर्थव्यवस्था में भ्रष्टाचार की गुंजाइश बहुत अधिक होती थी और सामाजिक संस्थाओं का पूरा इतिहास ईमानदारी का रहा है, इसलिए भी एन जी ओ को अच्छा माध्यम माना गया। किन्तु यह बात भी स्वाभाविक है कि ईमानदार से ईमानदार व्यवस्था को भी लंबे समय तक अधिक अधिकार दे दिये जाएँ तो उसमें भ्रष्टाचार के अवसर पैदा होने लगते हैं। हमने भारत में देखा है कि स्कूलों के शिक्षक अन्य सभी विभागों की तुलना में अधिक ईमानदार रहे हैं। किन्तु जब उन्हें साल बीज, बीड़ी पत्ता खरीदने के काम में लगाया गया तो उसका दुष्प्रभाव पूरे शिक्षक बिरादरी पर दिखाई दिया। न्यायपालिका को भी ईमानदार बताया जाता रहा, किन्तु धीरे-धीरे अधिकार बढ़ने के कारण उनमें भी भ्रष्टाचार बढ़ने लगा। लगभग यही स्थिति गैर सरकारी संगठनों की भी हुई। जो भी काम इन्हें दिया गया, उनमें सरकारी विभागों की तुलना में अधिक भ्रष्टाचार बढ़ता हुआ पाया गया।

आज तो स्थिति यहाँ तक हो गई है कि एन जी ओ एक व्यवसाय का रूप ले चुका है। मेरे एक मित्र एक बड़ा सामाजिक बोर्ड लगाकर एन जी ओ चलाते थे। उन्हें जब पता चला कि गोशाला के नाम से बहुत कमाई हो सकती है तो उन्होंने एक फर्जी गोशाला रजिस्टर्ड कराकर उसी नाम पर बहुत घपला करना शुरू किया। स्पष्ट है कि जहाँ लाभ और प्रतिष्ठा के अधिक अवसर दिखते हैं वहीं राजनेता, व्यवसायी और अपराधी प्रवृत्ति के लोग वेश बदलकर उस भीड़ में शामिल हो जाते हैं क्योंकि ये लोग मायावी होते हैं और आसानी से वेश बदलना जानते हैं। मैं देख रहा हूँ कि वर्तमान भारत में अनेक एन जी ओ ऐसे खुल गये हैं जिनका संचालन अपराधियों, राजनेताओं या बड़े-बड़े सरकारी अधिकारियों के परिवारों के पास है। स्पष्ट है कि इन सबका समाज सेवा से कोई लेना-देना नहीं है।

अब तो धीरे-धीरे एन जी ओ एक नई समस्या के रूप में विकसित हो रहे हैं। अनेक ऐसे संगठनों को या तो विदेशों से धन मिलता है या सरकार से। ये धनदाताओं की इच्छा अनुसार समाज को गलत दिशा में ले जाने का काम करते हैं। अधिकांश एन जी ओ अब वर्ग संघर्ष को बढ़ावा देते हैं क्योंकि दाता विदेशियों का यही मुख्य उद्देश्य है। कोई "बचपन बचाओ" तो कोई "महिला बचाओ" के नाम पर वर्ग संघर्ष को विस्तार दे रहा है। कुछ अन्य संगठन आदिवासी और हरिजन के नाम पर भी वही काम कर रहे हैं। मुझे तो एक भी ऐसा एन जी ओ नहीं दिखा जो समाज सशक्तिकरण अथवा वर्ग समन्वय का काम कर रहा हो क्योंकि कोई विदेशी संस्था यह नहीं चाहती कि भारत में वर्ग समन्वय हो। धीरे-धीरे स्थिति यहाँ तक आ गई कि एन जी ओ के लोग स्वयं ही सत्ता के सूत्रधार बनने का प्रयास करने लगे। अनेक बड़े एन जी ओ वालों ने या तो स्वयं राजनीति में प्रवेश किया अथवा अपने चमचों को वहाँ तक पहुँचाया। आर्थिक कठिनाई थी ही नहीं। सामाजिक संस्था के नाम से प्रतिष्ठा भी थी और सत्ता में जाने की पूरी-पूरी छूट भी थी। मैंने तो देखा है कि नक्सलवाद को हवा देने में भी एन जी ओ की अधिक भूमिका रही है। नक्सलवादियों के मुख्य संरक्षक किसी न किसी एन जी ओ का बोर्ड लगाकर अवश्य रखते हैं।

एन जी ओ चाहे जिस भी अच्छे उद्देश्य के लिए शुरू किये गये हों, किन्तु भारत में समाज को तोड़ने में वे अधिक भूमिका अदा कर रहे हैं। ये समाज में अव्यवस्था अधिक फैला रहे हैं। इन्हें मानव स्वभाव तापवृद्धि की कभी चिंता नहीं रही, किन्तु पर्यावरणीय तापवृद्धि के लिए दिन-रात चिंतित रहते हैं। सारे प्राकृतिक वातावरण का ठेका इन्हीं व्यावसायिक सामाजिक संगठनों ने अपने पास उठा रखा है, भले ही विकास कितना भी पिछड़ जाये। ये एन जी ओ कभी बिजली उत्पादन की वृद्धि नहीं होने देते क्योंकि इन्हें धन देने वाले विदेशियों की आंतरिक इच्छा यही रहती है।

एक तरफ तो एन जी ओ समाज के लिए समस्याएँ पैदा कर रहे हैं, दूसरी ओर इनमें भ्रष्टाचार भी 90 प्रतिशत से अधिक हो गया है। इसलिए सरकार और संस्थाओं के बीच में अब इन गैर सरकारी संगठनों से मुक्ति पाने की आवश्यकता है। हमें नहीं चाहिये ऐसी सामाजिक संस्थाएँ जो समाज सेवा का बोर्ड लगाकर समाज में अव्यवस्था फैलाती हैं। इनका तत्काल निजीकरण कर देना चाहिये। अंत में मेरा यह सुझाव है कि सरकार को चाहिये कि वह धीरे-धीरे ऐसे गैर सरकारी संगठनों पर शिकंजा मजबूत करे और इन्हें मजबूर कर दे कि वे शासन-मुक्त सामाजिक संस्थाओं के रूप में सेवा कार्य की पुरानी परिपाटी पर लौट जायें।

1. वाराणसी में नरेंद्र मोदी के जन्मदिन का भव्य उत्सव

बनारस में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के जन्मदिन का उत्सव बेहद खास तरीके से मनाया गया।अलग-अलग जगहों परउनके फैन्स अलग-अलग तरीके से उनका जन्मदिन सेलिब्रेट किया गया। वाराणसी में नमामि गंगे की ओर से प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के 75वें जन्मदिन पर मां गंगा को 75 मीटर लंबी चुनरी चढ़ाई गई। इस दौरान पूरे विधि-विधान से नमामि गंगे के कार्यकर्ताओं ने मां गंगा का पूजन-अर्चन कर प्रधानमंत्री के दीर्घायु की कामना की।

इसके अलावा, मां अन्नपूर्णा के दरबार में 108 बटुकों ने विशेष हवन-पूजन के बाद 75 किलो के लड्डू का भोग लगाकर उसे काटा और फिर आम भक्तों में उसे वितरित किया। इस दौरान मंदिर परिसर को खास तरीके से सजाया गया। वहीं दशाश्वमेध घाट पर सुबह सवेरे 75 बटुकों ने शंख की मंगलध्वनि और डमरुओं के डम-डम की आवाज़ के बीच 75 लीटर दूध से मां गंगा का दुग्धाभिषेक किया। इस आयोजन में शहर दक्षिणी के विधायक नीलकंठ तिवारी भी मौजूद रहे। वहीं वाराणसी में हरहुआ में स्थित 51 फीट ऊंची हनुमान प्रतिमा के सामने प्रधानमंत्री आवास योजना से लाभान्वित 75 महिलाओं ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को मिठाई खिलाकर और छप्पन भोग लगाकर उनका जन्मदिन मनाया।

इसके अलावा बनारस से सैंड आर्टिस्ट रूपेश ने भी सैंड आर्ट के जरिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को जन्मदिन की बधाई दी। उन्होंने सैंड आर्ट से प्रधानमंत्री की तस्वीर को उकेरा, जो लोगों के आकर्षण का केंद्र बना रहा। इसके अलावा योगी सरकार में मंत्री रविंद्र जायसवाल ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के जन्मदिन पर झाड़ू लगाकर स्वच्छता का संदेश दिया। बता दें, बीजेपी कार्यकर्ता 15 दिनों तक काशी में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का जन्मदिन उत्सव मनाएंगे।

2. धमतरी में विवाद के बाद रायपुर के तीन युवकों की हत्या, पांच आरोपी गिरफ्तार (13 अगस्त 2025)

छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले में विवाद के दौरान तीन युवकों की हत्या के आरोप में पुलिस ने पांच लोगों को गिरफ्तार कर लिया है, जबकि तीन नाबालिगों को हिरासत में लिया गया है। पुलिस अधिकारियों ने मंगलवार को यह जानकारी दी। धमतरी जिले के पुलिस अधिकारियों ने बताया कि जिले के अर्जुनी थाना क्षेत्र के अंतर्गत अन्नपूर्णा ढाबे में बीती रात कुछ लोगों ने विवाद के बाद रायपुर निवासी तीन लोगों–सुरेश हियाल, नितिन टांडी और आलोक ठाकुर–की हत्या कर दी। उन्होंने बताया कि घटना के बाद पुलिस ने पांच लोगों–गोपी दीवान (20), कुलेश्वर नेताम (25), रणवीर कुमार साहू (20), कमलेश ध्रुव (19) और गौतम दीवान (22)–को गिरफ्तार कर लिया है, जबकि इस मामले में तीन नाबालिगों को हिरासत में भी लिया गया है। पुलिस के मुताबिक रायपुर निवासी युवक एक कार में सवार होकर धमतरी गए थे। धमतरी जिले के पुलिस अधीक्षक सूरज सिंह परिहार ने मंगलवार को बताया कि अभी तक की गई जांच में पता चला है कि सोमवार रात लगभग सवा 11 बजे कुछ युवकों ने ढाबे में खाना खाने के बाद ढाबे के कर्मचारियों के साथ दुर्व्यवहार किया तथा उपद्रव मचाया। इस दौरान कार में सवार तीन युवक वहां खाना खाने पहुंचे और उपद्रव कर रहे युवकों का उनके साथ विवाद हो गया। इस दौरान उपद्रवियों ने कार में सवार तीन लोगों की चाकू मारकर हत्या कर दी।

पुलिस अधीक्षक परिहार ने बताया कि जानकारी मिली है कि आलोक ठाकुर, नितिन टांडी और सुरेश हियाल अपने साथियों के साथ ढाबा पहुंचे थे, जहां पहले से मौजूद आठ आरोपियों ने उनके साथ गाली-गलौज कर हाथापाई की और मुख्य आरोपी गोपी दीवान ने चाकू से तीनों पर जानलेवा हमला किया। इस घटना के बाद आरोपी युवक वहां से फरार हो गए। उन्होंने बताया कि पुलिस को जब घटना की जानकारी मिली तब घटनास्थल के लिए पुलिस दल रवाना किया गया तथा शवों को पोस्टमार्टम के लिए

भेजा गया। पुलिस ने आज सुबह तक इस मामले में तीन नाबालिगों समेत आठ लोगों को हिरासत में लिया। बाद में इनमें से पांच युवकों को गिरफ्तार कर लिया गया तथा आरोपी नाबालिग लड़कों को किशोर न्याय बोर्ड के सामने पेश किया गया। अधिकारी ने बताया कि पुलिस ने हत्या में प्रयुक्त हथियार को बरामद कर लिया है। पुलिस ने मामला दर्ज कर आरोपी युवकों को स्थानीय अदालत में पेश किया, जहां से उन्हें जेल भेज दिया गया।

3. ई20 पेट्रोल से घट रहा वाहनों का माइलेज, उपभोक्ता परेशान

नई दिल्ली, 17 सितंबर: देशभर में पेट्रोल में 20 प्रतिशत इथनॉल मिलाकर बने ई20 ईंधन की आपूर्ति शुरू होने के बाद वाहन मालिक अब माइलेज घटने की शिकायत कर रहे हैं। दिल्ली, मुंबई और बेंगलुरु जैसे शहरों में कई कार और दोपहिया चालकों ने बताया कि पहले जो वाहन 17 से 18 किलोमीटर प्रति लीटर का औसत देते थे, अब वही 14 से 16 किलोमीटर तक सीमित हो गए हैं। दोपहिया मालिकों ने भी लगभग इसी तरह का अनुभव साझा किया है और उनका कहना है कि ईंधन की कीमत तो समान है, लेकिन जेब से खर्च अब कहीं ज्यादा निकल रहा है।

विशेषज्ञों का मानना है कि इथनॉल की मात्रा बढ़ने से पेट्रोल की ऊर्जा क्षमता घट जाती है और इसका सीधा असर वाहनों के माइलेज पर पड़ता है। अनुमान है कि ई20 से औसतन 2 से 6 प्रतिशत तक माइलेज कम हो सकता है। पुराने मॉडल की गाड़ियों में असर और ज्यादा देखने को मिल सकता है, क्योंकि उनके इंजन और रबर पार्ट्स ई20 के अनुकूल नहीं बने हैं। इससे ईंधन प्रणाली और इंजन को नुकसान पहुंचने का भी खतरा है। हालांकि सरकार का दावा है कि ई20 पेट्रोल से देश को लंबे समय में लाभ होगा। पेट्रोलियम मंत्रालय का कहना है कि यह कदम प्रदूषण घटाने, किसानों को इथनॉल उत्पादन से आय बढ़ाने और विदेशी तेल पर निर्भरता कम करने में मदद करेगा। मंत्रालय ने यह भी कहा है कि नए वाहनों को ई20 के अनुरूप डिजाइन किया जा रहा है, इसलिए उनमें माइलेज पर बहुत मामूली असर होगा, जबकि पुरानी गाड़ियों में कुछ पार्ट्स समय-समय पर बदलने की आवश्यकता पड़ सकती है।

सरकार की दलीलों के बावजूद आम उपभोक्ता फिलहाल बढ़ते खर्च से चिंतित हैं। उनका कहना है कि अगर माइलेज घटा और पेट्रोल की कीमतें पहले जैसी ही रहीं, तो हर महीने का ईंधन बजट और बिगड़ जाएगा। अब देखना यह है कि आने वाले महीनों में ई20 ईंधन उपभोक्ताओं के लिए कितना बोझ साबित होता है और वाकई पर्यावरण व अर्थव्यवस्था को उतना ही लाभ पहुंचाता है, जितना सरकार दावा कर रही है।

4. न्यायाधीश यशवंत वर्मा पर गहराया संकट, इम्पीचमेंट प्रक्रिया शुरू

नई दिल्ली, 17 सितंबर: दिल्ली उच्च न्यायालय के न्यायाधीश यशवंत वर्मा के घर आग लगने के बाद नकदी बरामद होने के मामले ने अब गंभीर राजनीतिक और न्यायिक मोड़ ले लिया है। सुप्रीम कोर्ट की जांच समिति की रिपोर्ट के बाद संसद में उनके खिलाफ महाभियोग (इम्पीचमेंट) की प्रक्रिया शुरू हो गई है। घटना मार्च में सामने आई थी जब तुगलक क्रेसेंट स्थित न्यायाधीश के आधिकारिक आवास में आग लगी। दमकल की टीम ने आग बुझाने के बाद स्टोररूम से झोले और बोरियों में भरी हुई नकदी पाई। कई नोट जल चुके थे, लेकिन रकम इतनी बड़ी थी कि पूरे न्यायिक तंत्र में हलचल मच गई। जांच समिति की रिपोर्ट में स्पष्ट किया गया है कि वह कमरा न्यायाधीश और उनके परिवार के नियंत्रण में था, जिससे नकदी के स्रोत पर गंभीर सवाल खड़े हो गए।

सुप्रीम कोर्ट के तीन न्यायाधीशों की इस समिति ने अपनी विस्तृत जांच राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री को सौंपी है। रिपोर्ट में कहा गया है कि न्यायाधीश वर्मा के आचरण ने "न्यायपालिका की गरिमा को आघात पहुँचाया है" और उनके पद पर बने रहना उचित नहीं है। इसी आधार पर संसद में उनके खिलाफ महाभियोग की कार्यवाही शुरू करने की सिफारिश की गई है।

इस बीच, वरिष्ठ अधिवक्ता और राज्यसभा सांसद कपिल सिब्बल ने न्यायाधीश वर्मा का बचाव करते हुए कहा है कि वे 'देश के श्रेष्ठतम न्यायाधीशों में से एक हैं और उनके खिलाफ उठाए गए कदम राजनीतिक रूप से प्रेरित लगते हैं'। उधर, सुप्रीम कोर्ट ने हाल ही में उस याचिका को खारिज कर दिया जिसमें इस मामले में एफआईआर दर्ज करने की मांग की गई थी। अदालत ने कहा कि यह मामला पहले ही 'इन-हाउस' जांच प्रक्रिया से गुजर चुका है और अब आगे की कार्रवाई राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री के विवेक पर निर्भर है।

फिलहाल न्यायाधीश वर्मा को कोई न्यायिक कार्य नहीं सौंपा गया है और उन्हें इस्तीफ़ा देने या रिपोर्ट पर औपचारिक जवाब देने का अवसर दिया गया है। आने वाले हफ्तों में यह तय होगा कि संसद में इम्पीचमेंट प्रक्रिया किस दिशा में जाती है और क्या यह मामला न्यायपालिका की साख पर स्थायी चोट छोड़ जाएगा।

5. आधार नागरिकता का प्रमाण नहीं: सुप्रीम कोर्ट का स्पष्ट आदेश

AADHAAR

सुप्रीम कोर्ट ने सोमवार को कहा कि आधार कार्ड को पहचान पत्र के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, लेकिन इसे नागरिकता का प्रमाण नहीं माना जा सकता। अदालत का यह फैसला बिहार में विशेष मतदाता सूची पुनरीक्षण (Special Intensive Revision) से जुड़ी सुनवाई के दौरान आया।

निर्वाचन आयोग ने अदालत को बताया कि आधार को पहचान पत्र के रूप में मानने पर कोई आपत्ति नहीं है और इसे अब बिहार के मतदाता सूची पुनरीक्षण में 12वें वैध दस्तावेज़ के रूप में जोड़ा जाएगा। हालांकि, आयोग ने यह भी स्पष्ट किया कि आधार केवल पहचान और निवास का सबूत है, नागरिकता का नहीं। अदालत ने इस स्थिति को स्वीकार करते हुए कहा कि “आधार कार्ड से किसी व्यक्ति की पहचान साबित होती है, पर यह नागरिकता की गारंटी नहीं देता।”

इसी तरह हाल ही में बॉम्बे हाईकोर्ट ने भी अपने एक आदेश में कहा था कि केवल आधार, पैन कार्ड या वोटर आईडी होना किसी व्यक्ति को भारतीय नागरिक साबित नहीं करता। कोर्ट ने कहा कि ये दस्तावेज़ पहचान और सरकारी सेवाएं प्राप्त करने के लिए हैं, लेकिन नागरिकता प्रमाणित करने के लिए कानून के अनुसार अलग प्रक्रिया और दस्तावेज़ आवश्यक हैं।

इस फैसले का असर व्यापक माना जा रहा है, क्योंकि अब मतदाता सूची और नागरिकता से जुड़े विवादों में केवल आधार या अन्य पहचान दस्तावेज़ प्रस्तुत करना पर्याप्त नहीं होगा। विशेषज्ञों का कहना है कि इससे भविष्य में अवैध रूप से भारत में रह रहे व्यक्तियों को मताधिकार या अन्य नागरिक अधिकार प्राप्त करने से रोका जा सकेगा।

सरकार और निर्वाचन आयोग को अब यह सुनिश्चित करना होगा कि नागरिकता से जुड़े मामलों में सही दस्तावेज़ और प्रक्रिया का पालन हो, ताकि पहचान और नागरिकता के बीच किसी भी तरह की भ्रम की स्थिति न बने।

6. राहुल गांधी का आरोप: “निर्वाचन आयोग वोट चोरी की रक्षा कर रहा है”

कांग्रेस नेता राहुल गांधी ने भारतीय निर्वाचन आयोग पर सीधा निशाना साधते हुए आरोप लगाया है कि आयोग लोकतंत्र की रक्षा करने के बजाय “वोट चोरी करने वालों को बचा रहा है।” उन्होंने कहा कि देशभर में मतदाता सूचियों में बड़े पैमाने पर हेरफेर हुआ है और लाखों वोटरों के नाम या तो गलत ढंग से काट दिए गए हैं या फर्जी रूप से जोड़े गए हैं। राहुल गांधी ने इसे सुनियोजित “वोट चोरी” की साज़िश करार दिया और कहा कि यदि यह सिलसिला नहीं रुका तो चुनावी प्रक्रिया की साख ही समाप्त हो जाएगी।

राहुल गांधी ने कर्नाटक के अलांद और बेंगलुरु सेंट्रल लोकसभा सीट के महादेपुरा विधानसभा क्षेत्र का हवाला दिया। उनके अनुसार, महादेपुरा में करीब एक लाख से अधिक नामों में गड़बड़ी पाई गई है। उन्होंने कहा कि जांच में डुप्लिकेट वोटर, फर्जी पते, एक ही घर से सैकड़ों नाम, अमान्य फॉर्म और गलत दस्तावेज़ सामने आए हैं। उनका दावा है कि यह केवल एक विधानसभा क्षेत्र की समस्या नहीं है, बल्कि महाराष्ट्र, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और अन्य राज्यों में भी इसी तरह की अनियमितताएँ देखी गई हैं। राहुल गांधी ने कहा कि यह आंकड़े निर्वाचन आयोग के अपने ही डेटा का विश्लेषण कर सामने आए हैं और उनके पास “पुख़्ता सबूत” मौजूद हैं।

प्रेस वार्ता में उन्होंने तीखे शब्दों का इस्तेमाल करते हुए कहा, “जब निर्वाचन आयोग ही चोरी करने वालों की ढाल बन जाए, तो लोकतंत्र की रक्षा कौन करेगा? यह संस्थान जनता के भरोसे को खत्म कर रहा है और चुनाव को मज़ाक बना रहा है।” कांग्रेस पार्टी ने भी इस मुद्दे को गंभीर बताते हुए मांग की है कि इसकी स्वतंत्र जांच कराई जाए।

निर्वाचन आयोग ने इन आरोपों को तुरंत खारिज कर दिया और इन्हें “बेसलेस और गलत” बताया। आयोग ने कहा कि भारत में मतदाता सूची बनाने और उसमें बदलाव करने की प्रक्रियाRepresentation of People Act, 1950 औरRegistration of Electors Rules, 1960 के तहत सख्ती से नियंत्रित होती है। किसी भी मतदाता का नाम जोड़ने या हटाने के लिए निर्धारित फॉर्म, दस्तावेज़ और प्रक्रिया अपनाई जाती है, जिसकी कई स्तरों पर जांच होती है। आयोग ने स्पष्ट किया कि “किसी का नाम ऑनलाइन या स्वतः हटाना संभव नहीं है।”

कर्नाटक और महाराष्ट्र के मुख्य निर्वाचन अधिकारियों ने राहुल गांधी से कहा है कि यदि उनके पास गड़बड़ी के ठोस प्रमाण हैं, तो वे मतदाताओं के नाम और विवरण शपथ-पत्र के साथ प्रस्तुत करें। तभी चुनाव आयोग जांच की प्रक्रिया शुरू कर सकता है। आयोग ने यह भी कहा कि बिना सबूत दिए ऐसे गंभीर आरोप लोकतांत्रिक संस्थाओं की साख को चोट पहुँचाते हैं और चुनाव प्रणाली पर अविश्वास फैलाते हैं।

यह विवाद अब राजनीति का गर्म मुद्दा बन चुका है। कांग्रेस इसे लोकतंत्र की नींव पर प्रहार बता रही है, जबकि भाजपा और सत्ता पक्ष इसे "चुनावी बयानबाज़ी" करार दे रहे हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि यदि राहुल गांधी अपने दावों के समर्थन में दस्तावेज़ी प्रमाण पेश करते हैं, तो यह मामला चुनावी सुधार और मतदाता सूची की पारदर्शिता को लेकर गंभीर बहस छेड़ सकता है। दूसरी ओर, यदि प्रमाण नहीं मिलते, तो यह कांग्रेस की राजनीतिक रणनीति पर सवाल खड़ा करेगा।

फिलहाल, देशभर में "वोट चोरी" के इस आरोप ने मतदाता सूचियों की विश्वसनीयता और चुनावी प्रक्रिया की पारदर्शिता को राष्ट्रीय बहस का विषय बना दिया है। आने वाले दिनों में राहुल गांधी द्वारा सबूत पेश करने और निर्वाचन आयोग द्वारा संभावित कार्रवाई पर सभी की नज़रें टिकी हुई हैं।

7. मुस्लिम देशों में "इस्लामी NATO" की चर्चा तेज, सऊदी-पाकिस्तान रक्षा समझौते से बढ़ी हलचल

मध्य पूर्व और दक्षिण एशिया में बदलते भू-राजनीतिक हालात के बीच मुस्लिम देशों में एक "NATO जैसे सैन्य गठबंधन" की मांग फिर से तेज हो गई है। हाल ही में सऊदी अरब और परमाणु संपन्न पाकिस्तान ने एक पारस्परिक रक्षा समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं, जिसके तहत किसी भी हमले की स्थिति में दोनों देश संयुक्त जवाब देंगे। विश्लेषकों का मानना है कि यह कदम क्षेत्र में एक बड़े इस्लामी सैन्य गठबंधन की नींव साबित हो सकता है।

काहिरा में हुए आपातकालीन अरब-इस्लामी शिखर सम्मेलन में पाकिस्तान के रक्षा मंत्री ख्वाजा आसिफ ने कहा कि मुस्लिम देशों को अब महज़ बयानों से आगे बढ़कर NATO-स्टाइल संगठन की स्थापना करनी चाहिए। इराक के प्रधानमंत्री मोहम्मद शिया अल-सुदानी ने भी इसी तरह की अपील करते हुए कहा कि इस्राएली हमलों और कतर पर हालिया कार्रवाई ने स्पष्ट कर दिया है कि संयुक्त सुरक्षा बल की आवश्यकता है।

विशेषज्ञों का कहना है कि यदि यह पहल आगे बढ़ती है तो "इस्लामी NATO" आतंकवाद, सीमा पार आक्रमण और साझा सुरक्षा चुनौतियों से निपटने में अहम भूमिका निभा सकता है। हालांकि, इसके सामने सबसे बड़ी चुनौती सदस्य देशों के बीच गहरे राजनीतिक मतभेद और क्षेत्रीय प्रतिद्वंद्विताएँ होंगी। सऊदी अरब और ईरान जैसे देशों के बीच पुरानी वैमनस्यता और अलग-अलग भू-राजनीतिक हित किसी भी संयुक्त संगठन की राह मुश्किल बना सकते हैं।

फिलहाल सऊदी-पाकिस्तान रक्षा संधि को इस दिशा में पहला ठोस कदम माना जा रहा है। कूटनीतिक हलकों में चर्चा है कि अगर कतर, तुर्की, मिस्र और अन्य खाड़ी देश भी इसमें शामिल होते हैं तो यह गठबंधन वाकई "इस्लामी NATO" का रूप ले सकता है। दुनिया की निगाहें अब इस पर टिकी हैं कि मुस्लिम राष्ट्र केवल राजनीतिक बयानबाज़ी तक सीमित रहते हैं या आने वाले समय में वास्तविक सैन्य ढाँचे के साथ किसी नए गठबंधन की औपचारिक घोषणा करते हैं।

8. व्यक्तिगत अनुभव और संघ के साथ संबंध

मैं आज भतीजे पंकज और अपने परिवार के सामने यह बात रिकॉर्ड कर रहा हूँ। मैंने अपने विचारों के साथ कभी समझौता नहीं किया। मैंने जीवनभर संघ के साथ काम किया, लेकिन हमेशा यही स्थिति रही कि संघ मुझे पूरी तरह समझने की कोशिश करता रहा और मैं भी संघ को समझने का प्रयास करता रहा। फिर भी, हमारी बात कभी तय नहीं हो पाई। संघ प्रमुख हमेशा अपनी बात को सही मानते रहे और मैं अपनी बात पर अडिग रहा। संघ प्रमुख से मेरा सीधा संबंध तो था नहीं, लेकिन ऐसे लोग थे जो हम दोनों के बीच थे।

मेरे साथ आचार्य पंकज, राम बहादुर राय और अशोक गढ़िया जी रहे। बाद में रामवीर श्रेष्ठ भी कभी-कभार जुड़ जाते थे। हम सबका मानना था कि संघ को हमारी बात समझनी चाहिए, लेकिन उस समय संघ इसके लिए तैयार नहीं था।

साल 2005-07 के आसपास दिल्ली में विश्व हिंदू परिषद के दफ्तर में मेरा भाषण कराया गया। वहाँ गोविंदाचार्य जी के सामने भी मैंने अपनी बात रखी। मेरी बात रिकॉर्ड कर संघ प्रमुख तक पहुंचाई गई। लेकिन प्रवीण तोगड़िया और उनके साथियों ने उसे नकार दिया। फिर भी मैंने अपनी राह नहीं बदली।

करीब आठ साल पहले, 2017 में, संघ ने दोबारा हमें समझाने की कोशिश की। विजय कौशल जी महाराज इस प्रयास में लगे रहे, और मैं अपनी टीम के साथ मजबूत तर्कों से अपनी बात रखता रहा। 2017 में वृंदावन में एक बड़ी बैठक बुलाई गई। इसमें बाबा रामदेव, मोहन भागवत, राम बहादुर राय और बजरंग मुनि को शामिल होना था। चर्चा का उद्देश्य यही था कि अगर नरेंद्र मोदी, राम बहादुर राय और बजरंग मुनि संघ की लाइन पर नहीं चलते, तो उन्हें बदला जाए।

हमारी टीम ने तय किया कि हमें उस बैठक में शामिल नहीं होना चाहिए। हमने पहले ही अपने तर्क रख दिए थे, जिनका उनके पास कोई जवाब नहीं था। नतीजा यह हुआ कि बैठक में कोई ठोस निष्कर्ष नहीं निकला।

उस घटना के बाद मोहन भागवत ने हमारी बात को समझा और अपनी लाइन बदल दी। जो बात हम पहले से कह रहे थे, वही बात उन्होंने कहना शुरू कर दी। असल में बात बस इतनी थी कि संघ को सत्य और अहिंसा को ही मार्ग मानना चाहिए। यह विचार सिर्फ गांधी ने ही नहीं कहा था। गांधी का नाम लेना जरूरी भी नहीं है। सत्य और अहिंसा का मार्ग सबका है, और समाज का मार्ग है।

राज्य का पहला साधन दंड है, लेकिन समाज का साधन सत्य और अहिंसा होना चाहिए। संघ को समाज का प्रतिनिधि मानना ज्यादा उचित है, न कि राज्य का। यही बात हम लोग शुरुआत से मोहन भागवत को समझाना चाहते थे। 2017 के बाद उन्होंने इसे समझ लिया। इस बदलाव से प्रवीण तोगड़िया जैसे लोग असहमत हुए और अलग हो गए।

आज नरेंद्र मोदी और मोहन भागवत मिलकर दुनिया को दिशा दे रहे हैं। इसे आप गांधीवाद कहिए या यथार्थवाद, दोनों ही मान्य हैं। जब संघ ने धर्म और राज्य से ऊपर समाज को माना, तो हमने भी बिना संकोच उसके साथ चलना शुरू कर दिया।

अब मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है। आचार्य पंकज जी का भी स्वास्थ्य कमजोर है। पिछले हफ्ते मैं बहुत गंभीर स्थिति में था, लेकिन बच गया। इसलिए यह बात रिकॉर्ड कर रहा हूँ कि हमारा मार्ग सिर्फ सत्य और अहिंसा है। हम कभी इससे समझौता नहीं करेंगे। अगर बाधा आती है तो राज्य अपना रास्ता अलग ढूंढ सकता है, लेकिन समाज के लिए यही एकमात्र मार्ग है।

मैं ब्राह्मण हूँ और मैंने कभी सत्य और अहिंसा से समझौता नहीं किया। कितने भी दबाव आएँ, कानून-नियम दिखाए गए या आरोप लगाए गए, मैं अपनी बात पर अडिग रहा। गोविंदाचार्य और विजय कौशल जैसे लोग भी हमें समझाने की कोशिश करते रहे। लेकिन अब, इतने वर्षों बाद, नरेंद्र मोदी और मोहन भागवत भी वही बात समझ गए हैं। हमारा काम पूरा हुआ और हम एक तरह से मुक्त हो गए।

आज लोग हमें गांधीवादी कहते हैं। लेकिन जो खुद को गांधीवादी कहते हैं, वे संपत्ति और झगड़ों में उलझे हैं या साम्यवादी चक्रों में फंसे हैं। उन्होंने कभी भी इस मार्ग पर गंभीर प्रयास नहीं किया।

असल बात यह है कि सत्य और अहिंसा का मार्ग किसी एक नाम पर आधारित नहीं है। आप इसे गांधी मार्ग कहें या यथार्थ मार्ग, फर्क नहीं पड़ता। यही हिंदुत्व का सही मार्ग है। सावरकर की परिभाषा गलत थी, और मोहन भागवत ने आज सही परिभाषा दी है।

मैं अपने परिवार से यह कहना चाहता हूँ कि हम लोग केवल धन कमाने वाले नहीं हैं। हम विचारवान लोग हैं। हमारा विश्वास है कि सत्य और अहिंसा का मार्ग ही हिंदुत्व का मार्ग है, यही यथार्थवाद है, यही धर्म है और यही समाज का मार्ग है।

9. वर्तमान दुनिया में विचारधाराओं का टकराव

वर्तमान दुनिया में तीन विचारधाराओं के बीच खुला टकराव दिख रहा है। एक है साम्यवादी विचारधारा, जो हिंसा और बल प्रयोग की पक्षधर है। कुछ लोग गांधी के नाम लेकर इस साम्यवादी विचारधारा को गांधी के साथ जोड़कर भ्रम फैलाते हैं; सच्चाई यह है कि वे गांधी के नाम की दुकानदारी करते हैं, पर वास्तव में कम्युनिस्ट हैं - इसलिए समाज को ऐसे कम्युनिस्टों से सावधान रहना चाहिए। दूसरी विचारधारा है पश्चिम का पूंजीवाद; यह विचारधारा साम्यवाद तो विरुद्ध है ही, बल्कि गांधीवाद के भी विरुद्ध है। तीसरी विचारधारा है लोक स्वराज्य/अखण्ड भारत - हिंदुत्व - जिसे नरेंद्र मोदी, मोहन भागवत, बजरंग मुनि, योगी आदित्यनाथ तथा अन्य लोग संघ के साथ जोड़कर समाज के सामने प्रस्तुत कर रहे हैं। यह लोक स्वराज्य की विचारधारा वास्तव में गांधी मार्ग है। हम लोग गांधी मार्ग पर चलकर साम्यवाद और पूंजीवाद को परास्त करेंगे। हम चाहते हैं कि आप सभी अहिंसा और सत्य के गांधीवादी मार्ग पर चलें; विशेषकर उन कम्युनिस्टों के खिलाफ जो गांधी का नाम लेकर अपनी दुकानदारी चलाते हैं, हम उनके पक्ष में नहीं हैं। जो सावरकरवादी गांधी मार्ग को स्वीकार नहीं करते, उन्हें गांधी मार्ग को स्वीकार करना चाहिए - या वे कम्युनिस्टों और पूंजीवाद के पक्ष में जाने के लिए आज़ाद हैं। हमारा मार्ग अहिंसक है। हम भगत सिंह और सुभाष चंद्र बोस के मार्ग को गलत मानते हैं। मैं चाहता हूँ कि हम सब मिलकर साम्यवादी मार्ग को दुनिया से बहिष्कृत करें और पूंजीवाद को पराजित करें।

10. गांधीवाद का संरक्षण आवश्यक

समाज में मुट्ठी भर कम्युनिस्ट हैं। ये हिंसक विचारधाराएँ रखने वाले कम्युनिस्ट अहिंसक गांधी का नकाब ओढ़कर अपनी दुकानदारी करते हैं। इन्हें न गांधी से मतलब है, न अहिंसा से; ये हिंदुत्व-विरोधी हैं। जब तक ऐसे कम्युनिस्टों की साफ़-साफ़ पहचान करके इन्हें समाज से बहिष्कृत नहीं किया जाता, तब तक बेचारी गांधी इसी तरह बदनाम होते रहेंगे। ये कम्युनिस्ट प्रवीण तोगड़िया के साथ मिलकर अहिंसा और सत्य के खिलाफ षड्यंत्र करते रहते हैं। ऐसे कम्युनिस्टों को बहिष्कृत करना हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता है। हमारी रात्रिकालीन 8:00 से होने वाली प्रतिदिन की चर्चा में कोई कम्युनिस्ट नहीं बैठता। दो-चार गांधी-विरोधी सावरकरवादी जरूर बैठते हैं। इन्हें भी हम साफ़-साफ़ संदेश दे रहे हैं कि हिंदुत्व अहिंसा और सत्य के गांधीवादी मार्ग पर ही चलेगा, अन्य कोई मार्ग नहीं है। अब सुभाष चंद्र बोस, भगत सिंह, चंद्रशेखर आज़ाद का मार्ग बंद है। अहिंसा और सत्य का मार्ग एकमात्र मार्ग है। हमारे सभी मित्रों को यह बात समझ लेनी चाहिए कि हिंदुत्व को अब संघ और नरेंद्र मोदी ही परिभाषित करेंगे, अन्य कोई नहीं। इसलिए मैं लगातार कई दिनों से यह बात साफ़ कह रहा हूँ कि गांधीवाद ही एकमात्र मार्ग है। अब कम्युनिस्टों को गांधी के नाम की दुकानदारी बंद कर देनी चाहिए।

11. धर्म कथा और आशीर्वाद

लगभग 1 वर्ष पहले बाबा बागेश्वर धाम वाले रायपुर उद्योगपतियों के आमंत्रण पर हिंदुत्व को परिभाषित करने आए थे। मेरा लड़का भी औद्योगिक घराने का है। वे मेरे लड़के के मकान में ही एक सप्ताह तक रुके थे। कथा में लाखों की भीड़ होती थी, बाबा बागेश्वर धर्म को परिभाषित करते थे। अंतिम दिन विदाई के समय उन्होंने मुझे भी आशीर्वाद लेने के लिए बुलाया था, तो मैंने उन्हें कहा कि मैं बाबा विजय कौशल जी महाराज का आशीर्वाद ले चुका हूँ, वही हमारे मार्गदर्शक हैं, आप हमारे मार्गदर्शक नहीं हैं। और मैं उसी दिन विजय कौशल जी से रायपुर में आशीर्वाद लेने गया था। मैं अभी भी मानता हूँ कि संत विजय कौशल जी हमें आशीर्वाद देने की योग्यता रखते हैं। बाबा बागेश्वर धन के पुजारी हैं, आशीर्वाद देने की योग्यता नहीं रखते। यह बात बहुत मजबूती से रखी गई थी और उन्होंने हमारी बात को समझा। उन्होंने बहुत भारी भीड़ को आशीर्वाद दिया, लेकिन मैंने संत विजय कौशल जी का आशीर्वाद लिया, क्योंकि संत विजय कौशल जी हिंदुत्व को परिभाषित करने की योग्यता रखते हैं, जबकि बाबा बागेश्वर उस परिभाषा के अनुसार हिंदुत्व को परिभाषित करने की क्षमता मात्र रखते हैं।

12. भारत में दो संस्कृतियों का संघर्ष

भारत वर्तमान में दो संस्कृतियों के बीच टकरा रहा है। एक संस्कृति वह है जिसने आस्था की ताकत पर कानून बनाए और अब भारत का हर कम्युनिस्ट उस आस्था की ताकत पर बदले गए कानून को ही आधार बनाकर उसे अपने लाभ के लिए आगे बढ़ाना चाहता है। यह है भारत में साम्यवाद।

एक दूसरी संस्कृति है भारत में, जो कहती है कि आस्था की ताकत पर कानून बनाए गए और इस प्रकार के कानूनों को फिर से आस्था की ताकत पर सुधारा जाएगा। आस्था का टकराव आस्था से होगा और जब टकराव के बाद नए कानून बनेंगे, तर्क के आधार पर होंगे, तब वे कानून मान्य होंगे और यही टकराव आज चल रहा है।

भारत का हर गांधीवादी अब केवल विनम्र श्रद्धांजलि देने तक टिक गया है क्योंकि उसके पास आस्था नहीं है – आस्था की ताकत पर बदले गए कानून में। और उन कानूनों को आधार बनाकर वह कम्युनिस्टों के साथ हाथ मिलाकर आस्था को परिभाषित कर रहा है। अब समय आ गया है कि आस्था को यथार्थ के धरातल पर कसा जाए और आस्था, आस्था से टकराकर नए तर्कसंगत कानून निर्माण करे। और वही जो कानून नए बनेंगे, वे कानून समाज में मान्य होंगे।

यदि दोनों संस्कृतियों के बीच टकराव है, तो देश का दुर्भाग्य है कि भारत में साम्यवादी बस केवल दिन-रात श्रद्धांजलियाँ गिनते रहते हैं और आगे यथार्थ से भेंट नहीं करना चाहते। अब भारत में संघ और नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में आस्था से आस्था का टकराव होगा और नए यथार्थवादी कानून बनेंगे, जो बन रहे हैं, और साम्यवादी छाती पीटते रह जाएंगे। यही भारत में संस्कृतियों का टकराव दिख रहा है और यह लगता है कि धीरे-धीरे अंतिम चरण में है।

13. विश्व राजनीति में ट्रम्प की चालें

नेपाल में लोकतंत्र नया स्वरूप ग्रहण कर रहा है। भारत एआई के मामले में लोकतांत्रिक तरीके से दुनिया से प्रतियोगिता कर रहा है। वहीं ट्रम्प दुनिया का नेतृत्व अपने पास इकट्ठा करने के लिए अपने घोड़े दुनिया में भेज रहे हैं। भारत ट्रम्प के घोड़े को बाँधने की तैयारी कर रहा है। जहाँ एक तरफ़ दुनिया यथार्थ से सामना कर रही है, वहीं भारत में विपक्ष का नेतृत्व पागल राहुल गांधी के हाथों में पड़कर “हाइड्रोजन बम” के सपने देख रहा है और राहुल गांधी की ऐसी मूर्खतापूर्ण बातों को ही विपक्ष के कई नेता यथार्थ कहकर हवा में उछाल रहे हैं। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि विपक्ष को ऐसी मूर्खतापूर्ण बातें करने दीजिए। हम, आप मिलकर सपनों में नहीं, यथार्थ में ट्रम्प के घोड़े को रोकेंगे और हमारा पागल विपक्षी नेता ट्रम्प के घोड़े की बागडोर संभालेगा ही। इसलिए यथार्थ में सोचने का समय आ गया है, हवा में बातें करने का नहीं

14. हिंसा का लोकतंत्र में कोई स्थान नहीं

पिछले दिनों ही नेपाल में सत्ता परिवर्तन हुआ और प्रमाणित हुआ कि भारत का लोकतंत्र सही दिशा में और सही तरीके से कार्य कर रहा है। कल ही अमेरिका में भी ट्रम्प के एक बेहद करीबी की गोली मारकर हत्या कर दी गई। इससे सिद्ध हुआ कि भारत का लोकतंत्र दुनिया का सबसे अच्छा और सफल लोकतंत्र है। कल ही भारत में छापा मारकर पुलिस ने कई आतंकवादियों को गिरफ्तार किया, जिनमें लगभग सभी मुसलमान थे। नरेंद्र मोदी और मोहन भागवत की सरकार के विरोधी हिंसा पर विश्वास करते थे। सभी आतंकवादी अहिंसक तरीके से पकड़े गए। स्पष्ट है कि लोकतंत्र में हिंसा का कोई स्थान नहीं है। अब भारत सरकार या भारतीय सेना को किसी हिंसक समर्थन की जरूरत नहीं है। हमारी सरकार और समाज हर प्रकार की हिंसक गतिविधियों को रोकने में सक्षम हैं। अतः अब हमारे लिए सिर्फ़ एक ही मार्ग है कि हम अहिंसक तरीके से समाज में शांति बनाए रखें और सरकार पर पूरा भरोसा रखें। इसलिए हम सब मिलकर एक अहिंसक समाज का निर्माण करें, जहाँ हिंसा का कोई स्थान न हो।

15. वैचारिक संतुलन और गर्व

नेपाल की घटनाओं के बाद भारत यह लगभग पूरी तरह प्रमाणित कर चुका है कि भारत में पूरा लोकतंत्र है, आधा-अधूरा नहीं। नरेंद्र मोदी के आने से पहले भी भारत में आधा लोकतंत्र था, जो उसके बाद पूरा हो गया। अब भारत में किसी सैनिक या असैनिक क्रांति की ज़रूरत नहीं है। जब तक भारत में मोदी और संघ आपसी सहमति से सरकार चलाते रहेंगे, तब तक भारतीय स्थिरता को कोई खतरा नहीं है। ट्रम्प ने राहुल गांधी के साथ मिलकर नई चुनौती पेश की। राहुल ने भी घोषणा की कि 6 महीने में मोदी सरकार को जनता उखाड़ फेंकेगी। शायद ही भारत के किसी नेहरू परिवार के गुलाम ने राहुल की बात को गौर से सुना हो, क्योंकि राहुल दिनभर कुछ भी पागलपन की बातें करते रहते हैं और संघ-विरोधी मानसिकता के लोग उन बातों को सुनकर प्रसन्न होते रहते हैं। सारी ताकत लगा देने के बाद भी विपक्ष को सिर्फ़ यही सफलता हाथ लगी कि वह संकट काल में भी एकजुट रहा, अन्यथा चुनाव में उसकी सारी पोल खुल गई। जब तक विपक्ष संघ और मोदी की एकजुटता में कोई योजना नहीं बना पाएगा, तब तक भारत में इसी तरह संघ नेतृत्व का लोकतंत्र चलता रहेगा और विपक्ष छाती पीटता रहेगा।

इसलिए हम आप सब मिलकर संघ-प्रस्तावित भारतीय लोकतंत्र को दुनिया के सामने मजबूती से प्रस्तुत करें। हमें गर्व है कि हम शांतिप्रिय हिंदू हैं और वैचारिक संतुलनवादी हिंदुत्व को संघ के नेतृत्व में आगे बढ़ाएँ।

16. राष्ट्रीय और छत्तीसगढ़ मीडिया में समाचारों की प्राथमिकता

राष्ट्रीय स्तर पर चार समाचारों को महत्व दिया गया है, जिनमें छत्तीसगढ़ मीडिया ने तीन बातों को अधिक महत्व दिया और राष्ट्रीय स्तर के समाचारों में इस बात को ज्यादा महत्व दिया गया कि केंद्र सरकार ने 22 तारीख से जीएसटी में बदलाव की घोषणा की। राष्ट्रीय स्तर के समाचारों में जीएसटी ने जोरदार कटौती की, केंद्र सरकार की प्रशंसा की। जबकि छत्तीसगढ़ मीडिया में तीन बातों को अधिक महत्व दिया गया।

पहली बात, उत्तर प्रदेश उच्च न्यायालय ने इस बात को महत्व दिया कि न्यायालय ने यह बात साफ़ की कि उत्तर प्रदेश में उच्च न्यायालय ने सरकार को आदेश दिया कि सरकार उत्तर प्रदेश के सभी जिलों में डीजे बजाने पर रोक लगा दे। छत्तीसगढ़ की मीडिया ने भी इस बात को बहुत महत्व दिया है।

दूसरी ओर, सुप्रीम कोर्ट ने यह आदेश दिया है कि बाढ़ प्रभावित दिल्ली के आसपास सरकार इस बात को विशेष

महत्व दे कि बाढ़ एक बहुत गंभीर समस्या है। इस बात को छत्तीसगढ़ की मीडिया ने प्रमुखता से उठाया है।

तीसरी ओर, छत्तीसगढ़ के मीडिया ने जीएसटी कानून को अपेक्षाकृत कम महत्व दिया है। समझ में नहीं आया कि डीजे का मामला और बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों का मामला को छत्तीसगढ़ मीडिया ने बहुत महत्व दिया है, जबकि सच बात यह है कि वर्तमान में जीएसटी मामले को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए था। इस तरह छत्तीसगढ़ के मीडिया ने जीएसटी को कम महत्व दिया, जबकि छत्तीसगढ़ का मीडिया कम महत्व के मुद्दों को अधिक महत्व दे रहा है। जबकि वर्तमान भारत में सबसे महत्वपूर्ण बदलाव जीएसटी में बदलाव को दिया जाना चाहिए था। इस तरह छत्तीसगढ़ का मीडिया राष्ट्रीय बदलाव को अधिक महत्व न देकर कम महत्वपूर्ण प्रश्नों को ज़ोर-शोर से उठा रहा है।

चौथी बात, छत्तीसगढ़ मीडिया ने इस बात को ज्यादा महत्व दिया है कि इंदौर, मध्य प्रदेश में चार नवजात बच्चों की मृत्यु हो गई क्योंकि उन चारों को सरकारी अस्पतालों की लापरवाही के कारण उचित इलाज नहीं मिल पाया। इस चौथी बात को भी छत्तीसगढ़ के अख़बारों ने बहुत महत्व दिया, जबकि देश भर के मीडिया ने इसको बहुत महत्व नहीं दिया।

इस तरह देश का मीडिया जीएसटी को महत्व देता रहा और छत्तीसगढ़ का मीडिया चार नवजात बच्चों की मृत्यु, उत्तर प्रदेश के उच्च न्यायालय और सुप्रीम कोर्ट के बाढ़ प्रभावित होने वाले नुकसान को अधिक महत्व देता रहा, जबकि छत्तीसगढ़ मीडिया ने जीएसटी को कम महत्व दिया। मेरे विचार से छत्तीसगढ़ के मीडिया को अपनी नीतियों पर पुनः विचार करना चाहिए। ये तीनों ही बातें जीएसटी के मुकाबले कम महत्वपूर्ण मानी जानी चाहिए। मेरे विचार से छत्तीसगढ़ के मीडिया को अधिक महत्वपूर्ण घटनाओं को ज्यादा महत्व देना चाहिए।

18. अंतरात्मा और नेतृत्व का विश्लेषण

भारतीय सत्ता की राजनीति में चार लोगों की मिलकर बहुत बड़ी योजना थी। उनमें राकेश टिकैत, अरविंद केजरीवाल, सत्यपाल मलिक, उपराष्ट्रपति धनकड़ मिलकर बहुत बड़ी राजनीतिक महत्वाकांक्षा पर काम कर रहे थे। इन पाँचों की जाट राजनीति को जोड़कर एक बड़ा सपना देखा था, लेकिन एकाएक सत्यपाल मलिक चले गए, अरविंद केजरीवाल कमजोर हो गए, राकेश टिकैत की भी ताकत बहुत कम हो गई थी और जगदीप धनकड़ को नरेंद्र मोदी ने बड़ा झटका दे दिया। इस तरह इन सब की राजनीतिक महत्वाकांक्षा के सपने टूट गए।

इन सब में अरविंद केजरीवाल सबसे अधिक चालक माने जाते थे और धनकड़ सबसे अधिक नासमझ। जब इन सब के सपने बिखर गए तो जगदीप धनकड़ ने निराश होकर सारी पोल खोल दी। परिणामस्वरूप कल धनकड़ ने उपराष्ट्रपति पद से हटाए जाने के बाद एक लेख लिखकर तहलका मचाने की कोशिश की, लेकिन बेचारे अलग-थलग पड़ गए। निराश होकर धनकड़ ने कल एक लेख लिखा और तहलका मचाने की कोशिश की, लेकिन धनकड़ की सारी योजना फेल हो गई। इस तरह इन पाँचों की एक-एक पोल खुल गई। बेचारे धनकड़ कुछ नहीं कर पाए और इस तरह इन सब की योजना धरी की धरी रह गई।

धनकड़ को इस तरह बेवकूफी नहीं करनी चाहिए थी, लेकिन नासमझ धनकड़ ने यह लेख लिखकर बड़ी भूल कर दी। राजनीति में कमअक्ल दोस्त बहुत बड़ा नुकसान कर देते हैं, जिसका परिणाम अरविंद केजरीवाल को भुगतना पड़ेगा। जाटों को केंद्र बनाकर धनकड़ के नेतृत्व में जो महत्वाकांक्षी योजना बनी थी, उसकी अकाल मृत्यु हो गई। स्पष्ट है कि राजनीति में कमअक्ल दोस्त बहुत बड़ा नुकसान कर देते हैं, जिसका परिणाम अरविंद केजरीवाल को भुगतना पड़ेगा।

19. धर्मगुरुओं का दिखावटी विरोध

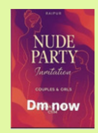

रायपुर में नग्न नृत्य का प्रचलन बढ़ रहा है। मेरे विचार से इस तरह की संस्कृति को कानून के द्वारा नहीं रोका जा सकता। मैं ऐसे किसी कानून के विरुद्ध हूँ। बढ़ती हुई नग्न संस्कृति को पारिवारिक और सामाजिक संस्कारों के माध्यम से ही रोका जा सकता है। कानून के द्वारा रोकना न संभव है, न उचित।

विशेष रूप से ऐसे सामाजिक वातावरण में, जब इस संस्कृति का प्रत्यक्ष विरोध करने वाले अधिकांश धर्मगुरु खुद ही चरित्रहीन हैं और वे इस संस्कृति का विरोध करने का नाटक करते हैं। मैंने कल टीवी पर सुना कि अनेक तथाकथित धर्मगुरु इस नग्न संस्कृति का विरोध करने का नाटक करते हैं, जबकि उनका स्वयं का स्तर बहुत गिरा हुआ है। इसलिए मेरा विचार है कि धर्मगुरुओं के भरोसे इस संस्कृति को बढ़ने से नहीं रोका जा सकता। कानून के जरिए रोकना तो संभव ही नहीं है।

ऐसे तथाकथित नाटक करने वाले धर्मगुरुओं से समाज को बचाने की जरूरत है। इस नग्न संस्कृति को स्वतंत्रता देना ही वर्तमान में सबसे अच्छा मार्ग है। मैं एक धर्मगुरु होने के नाते ऐसी स्वतंत्रता का पक्षधर हूँ।

लोकतंत्र में न्याय और हिंसा- इतिहास से सबक

जब भारत अंग्रेजों का गुलाम था उस समय भारत में दो अलग-अलग विचारधाराओं ने मिलकर स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई लड़ी। एक विचारधारा को हम नरम दल के नाम से जानते हैं और दूसरी को गरम दल। दोनों ही विचारधाराओं ने अपने-अपने क्षमता के अनुसार हिंसा अथवा अहिंसा के मार्ग को अपनाकर स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई में भाग लिया। जहां नरम दल किसी भी प्रकार की हिंसक क्रांति का पक्षधर नहीं था वहीं दूसरी तरफ गरम दल हिंसक क्रांति के बल पर भी स्वतंत्रता का पक्षधर था। गुलामी के कालखंड में स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए हिंसा अथवा अहिंसा किसी भी तरीके को अपनाया जा सकता है, किंतु हिंसा करते समय इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि यह सुनियोजित होनी चाहिए और इसमें सफलता की गारंटी होनी चाहिए अन्यथा क्रांति के असफल हो जाने पर और भी अधिक गुलामी आ सकती है।

भारत की स्वतंत्रता में लगभग 7.50 लाख क्रांतिकारी बलिदानी हुए। एक तरफ भगत सिंह, सुभाष चंद्र बोस, चंद्रशेखर आजाद, पंडित राम प्रसाद बिस्मिल, जैसे क्रांतिकारी विचारधारा के लोग थे। दूसरी तरफ गांधी विचारधारा दिखाई देती है। हालांकि क्रांति का अर्थ किसी की हत्या कर देना अथवा उसे मार देना नहीं होता क्रांति शब्द संस्कृत कि धातु "क्रं" शब्द से उत्पन्न होता है जिसका अर्थ होता है क्रम से विपरीत परिस्थिति में भी निरंतर आगे बढ़ते चले जाना। पंडित राम प्रसाद बिस्मिल ने अपने जीवन में किसी की हत्या नहीं कि यहां तक कि काकोरी कांड करते समय भी वे हत्या से दूर रहे, किन्तु दुर्घटना वश एक यात्री कि मृत्यु हो जाति है, फिर भी वह क्रांतिकारी कहलाए। क्योंकि विपरीत से विपरीत परिस्थितियों में भी वह अपने लक्ष्य की ओर निरंतर बढ़ते रहे, अतः क्रांति का अर्थ है जो सभी प्रकार के ताप सहकार के भी अपने लक्ष्य को प्राप्त करें।

दूसरी तरफ गांधी जी अहिंसक क्रांति के पक्षधर थे और गांधी जी ने भारत आने के बाद सबसे पहले असहयोग आंदोलन, उसके बाद नमक आंदोलन और भारत छोड़ो जैसे आंदोलन का सहारा लेकर अंग्रेजों का विरोध किया। यदि भारत में अंग्रेजों की जगह मुस्लिम शासन होता तो संभवतः गांधी जी की अहिंसा का सिद्धांत पूरी तरह से गलत होता। किंतु अंग्रेजों की गुलामी और इस्लामिक कालखंड कि गुलामी में बहुत अंतर था, अंग्रेजों ने भारत को गुलाम बनाने के लिए शासन, कानून और संविधान का सहारा लिया। यह बात और है कि उस समय भारत का

: **ब्रिजेश रॉय** समाजविज्ञानी

संविधान लंदन में बनता था और कानून भी अंग्रेजों के ही बनाए हुए थे, लेकिन इस्लामी शासन पद्धति पूरी तरह से हिंसा और बल प्रयोग पर आधारित होती है। अंग्रेजों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को कुचलना के लिए जलियांवाला बाग में सैकड़ो लोगों पर गोलियां भी चलवा दी लेकिन उनका यह तर्क था कि उन्होंने रॉलेक्ट एक्ट बना रखा था और उन्होंने जो कुछ भी किया वह कानून के अनुसार किया।

गुलामी के समय में जिस मार्ग से स्वतंत्रता मिल सकती है उसका समर्थन किया जा सकता है। किंतु गुलामी और लोकतंत्र में बहुत अंतर होता है लोकतांत्रिक व्यवस्था में आपका अपना संविधान होता है, आपके पास वोट देने का अधिकार होता है, न्यायालय आपके मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी देता है और समाज के द्वारा तंत्र का निर्माण किया जाता है जिसकी नियुक्ति का उद्देश्य ही सुरक्षा और न्याय है। ऐसी स्थिति में लोकतांत्रिक व्यवस्था में किसी भी प्रकार की हिंसा का समर्थन करना बिल्कुल अनुचित है।

लगभग 800 वर्षों की गुलामी के कारण भारतीय समाज में भी ऐसी विकृतियों आ गई जिस कारण से भारतीय समाज ने सामाजिक हिंसा का समर्थन करना शुरू कर दिया। फिर भी हिंदुओं में यह स्वभाव लगभग ना के बराबर दिखाई देता है, जो कुछ सामाजिक हिंसा के समर्थक लोग हैं, वह भी इस्लामिक शासन पद्धति के प्रभाव के कारण ही है क्योंकि इस्लाम में सामाजिक हिंसा की पूर्ण अनुमति होती है। कितनी ही मॉब लिंचिंग की घटनाएं ऐसी दिखाई देती हैं जहां पर भीड़ अथवा समूह के द्वारा किसी को घेर कर मार दिया जाता है। यदि किसी व्यवस्था में मुस्लिम मैजोरिटी में हो जाए तो फिर अल्पसंख्यकों के साथ हिंसा बड़ी सामान्य बात हो जाती है। अभी कुछ समय पहले कुछ अपराधिक प्रवृत्ति के तत्वों ने भारत की संसद में घुसपैठ की कोशिश की और बहुत उपद्रव मचाया। यह सभी तत्व स्वयं को भगत सिंह की विचारधारा का समर्थक बताते हैं किंतु यहां प्रश्न या खड़ा होता है कि क्या भगत सिंह होते तो वह भी यही मार्ग अपनाते? मुझे लगता है की भगत सिंह ने जो मार्ग अपनाया वह मार्ग उचित था क्योंकि उस

समय गुलाम था और इसीलिए भगत सिंह क्रांतिकारी कहलाए किंतु यदि कोई भगत सिंह के समर्थन के नाम पर लोकतंत्र में इस कृत्य को अंजाम देता है तो इस परिस्थिति में उसे क्रांतिकारी नहीं आतंकवादी कहा जाएगा।

जब भगत सिंह ने यह किया था उस समय शासन पद्धति हमारी नहीं थी, ना हमारे चुने हुए लोग थे, ना तो हमारा संविधान था, और ना तो न्यायालय में हमारी बात ही सुनी जाती थी। किंतु स्वतंत्रता में जब तंत्र की नियुक्ति आपके द्वारा ही की गई है, न्यायालय मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी भी देता है और आपको वोट देने का भी अधिकार प्राप्त है। ऐसी व्यवस्था में हिंसा का समर्थन करना आपको आतंकवादी ही बनाएगी क्रांतिकारी नहीं। अर्थात हम भगत सिंह का सम्मान तो कर सकते हैं भगत सिंह के विचारों का उस परिस्थिति में समर्थन भी कर सकते हैं लेकिन लोकतांत्रिक व्यवस्था में भगत सिंह के विचार को लागू करने का प्रयास करना उचित नहीं है।

लोकतांत्रिक व्यवस्था में तो आपको समझदार बनना चाहिए और जिस तंत्र का निर्माण सुरक्षा और न्याय के लिए किया गया है उस तंत्र को अन्य सभी कार्यों से मुक्त कर सुरक्षा और न्याय तक सीमित करना चाहिए। यह बात भी है कि अगर सामाजिक हिंसा बढ़ रही है तो इसका एक मुख्य कारण राज्य की असफलता है, राज्य सुरक्षा और न्याय दे पाने में सक्षम दिखाई नहीं देता और न्याय तो लगभग दूभर ही है। ऐसी स्थिति में राज्य की असफलता का परिणाम यह निकल रहा है कि व्यक्ति स्वयं न्याय करने का पक्षधर है और हिंसा का सहारा लेता है। कुछ राज्यों ने गैर कानूनी तरीके से एनकाउंटर करके भी न्याय को दिलाने का काम किया। यहां प्रश्न यहां खड़ा होता है कि कानूनी तरीके से देर से मिले न्याय का समर्थन किया जाए अथवा गैर कानूनी तरीके से त्वरित न्याय का समर्थन किया जाए? जबकि कानून का निर्माण न्याय के लिए हुआ है। यह ध्यान देने की बात है कि कानून और न्याय के मध्य न्याय सर्वोच्च होता है कानून नहीं।

यदि न्याय में देरी हो रही है तो फिर उस कानून, उस व्यवस्था, उस संविधान को परिवर्तित करने की आवश्यकता है। लेकिन किसी भी परिस्थिति में सामाजिक हिंसा का समर्थन नहीं करना चाहिए, क्योंकि सामाजिक हिंसा अराजकता का रूप धारण कर सकती है जो कि लोकतांत्रिक व्यवस्था को तानाशाही की तरफ भी धकेल सकता है। व्यवस्था में सुधार किया जाए और लोकतांत्रिक तरीके से समय पर न्याय मिले, किंतु यदि न्यायिक आपातकाल की स्थिति हो और समय पर न्याय ना मिले तब राज्य द्वारा गैर कानूनी तरीके से हिंसा करके अपराधियों को दंडित करने पर मौन रहना अथवा उसका अप्रत्यक्ष रूप से समर्थन करना उचित है। लेकिन यह एक आपातकालीन स्थिति है आदर्श स्थिति नहीं, कुछ समय पहले न्यायालय ने बुलडोजर चलाने के ऊपर जिस तरह से गाइडलाइंस बनाई है ऐसा लगता है कि न्यायालय स्वयं अपराधियों को बचा रहा है। लेकिन इसका दुष्परिणाम यह है कि इससे सामाजिक हिंसा को प्रोत्साहन मिलता है जो कि लोकतंत्र के लिए एक चुनौती है। अतः आदर्श स्थिति यही होगी कि लोकतांत्रिक तरीके से समय पर न्याय मिले।

आर्थिक विषमता और समाजवादी विचारधारा की विडंबना

: ज्ञानेन्द्र आर्य

जनकल्याणकारी सरकारों की पहली प्रतिबद्धता होती है नागरिक सुविधाओं का विस्तार। इनमें सुरक्षा और न्याय तो आते ही हैं, लेकिन उनका अधिक ध्यान आर्थिक असमानता घटाने और सामाजिक न्याय बढ़ाने पर होता है। यही दो कार्य सरकार को बड़ी शक्ति प्रदान करते हैं। कोई भी संगठन, शक्ति की चाह से स्वयं को बचा नहीं पाता। शायद इसीलिए ब्राह्मणों को कभी संगठित नहीं किया गया। राज्य और प्रबंधन की रचना के लिए यह आवश्यक माना गया कि क्षत्रिय और वैश्य तो संगठित रहें, पर ब्राह्मण वैचारिक और सर्वहितकारी भूमिका में संगठन से बाहर रहें।

समय के थपेड़ों में ब्राह्मणों ने आध्यात्मिकता और वैराग्य को अपनाया, जबकि क्षत्रिय शक्ति और वैश्य संपत्ति के प्रति आकर्षित हुए। राज्य ने अपने को जनकल्याणकारी घोषित किया और प्रबंधन ने नवीनता, तेज गति और अन्वेषण को महत्व दिया। इसी असंतुलन का परिणाम हुआ शोषक राज्य सत्ता और पूंजीपति वर्ग। भारत की वर्ण व्यवस्था ही ऐसी थी जिसमें इस समस्या का समाधान निहित था। इसके विपरीत आत्ममुग्ध प्रजातियां अपनी संस्कृति थोपने में लगी रहीं। साम्यवाद ने 1920 के बाद अपना रूप बदला और समाजवाद के रूप में अपना व्यवस्था का विकल्प प्रस्तुत किया। समाजवाद का मॉडल मार्गदर्शक, शासक, प्रबंधक और सेवक सभी को जोड़ता था, इसलिए यह जाति-आधारित व्यवस्था से बाहर निकलकर जनकल्याण के लिए अधिक उपयुक्त प्रतीत हुआ।

लेकिन सौ साल बाद समाजवाद का चेहरा कहीं अधिक विकृत होकर सामने आया है। बांग्लादेश, नेपाल, फ्रांस, ग्रीस और अफ्रीका जैसे देशों में समाजवादी सिद्धांत व्यवस्था को ही संकट में डाल चुके हैं। समाजवाद ने व्यक्ति की योग्यता और संघर्ष की धार कुंद कर दी। फ्रांस में जब प्रधानमंत्री ने कर्ज से उबरने के लिए खर्चों में कटौती की घोषणा की, तो जनता विद्रोह पर उतर आई। ठीक वही तर्क बांग्लादेश में भी सत्ता परिवर्तन का कारण बना, कुछ लोग अवसर की समझ और सामर्थ्य के बल पर धनाढ्य हो गए और बाकी जनता बिना श्रम किए उसी धन में हिस्सेदारी चाहने लगी। आज हाल यह है कि लोग कहते हैं, “हमारे खर्च मत घटाओ, अमीरों से पैसा लूटकर हमें दो।” क्या यही सभ्यता की दिशा है? यदि वर्णाश्रम व्यवस्था पर जन्मना जाति और शोषण का आरोप लगता है, तो समाजवादी व्यवस्था पर यह क्यों न कहा जाए कि उसने लोगों को उत्पादनविहीन और श्रमविमुख बनाया है।

शिक्षित बेरोजगारी, कृत्रिम रूप से सस्ती ऊर्जा और श्रम मूल्य का राजकीय संरक्षण - ये सब आर्थिक विषमता को और गहरा कर रहे हैं। साथ ही लोगों के भीतर कामचोरी और दबाव डालकर अधिकार मांगने की प्रवृत्ति खतरनाक स्तर तक बढ़ा रहे हैं। आर्थिक विषमता को गंभीर समस्या बताने वाले अगर इसके प्राकृतिक कारण—आलस्य, प्रमाद और संसाधनों के दुरुपयोग—को भी उजागर करते, तो श्रम सम्मान बढ़ता। लेकिन समाजवादी और साम्यवादी विचारधारा के संगठित कार्यकर्ता तो भीड़ जुटाकर व्यवस्था को डराते हैं और लूट में हिस्सेदारी चाहते हैं। विडंबना यह है कि श्रम की महत्ता बताने वाले गांधी और विनोबा के कथित शिष्य भी अब भीड़ को इसी लूट में हिस्सेदारी के लिए भड़का रहे हैं।

ज़ूम चर्चा कार्यक्रम से- :विपुल आदर्श

दिनांक 15 9 2025 को आयोजित ज़ूम चर्चा कार्यक्रम में 'वैचारिक' विषय पर चर्चा हुई। चर्चा के दौरान वैचारिकी से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर बात की गई।

किसी भी विषय वस्तु को समझने के लिए परिभाषाओं का सही होना जरूरी है। परिभाषाएं तभी सही होगी जब परिभाषा तय करने वाला सही निष्कर्ष तक पहुंचेगा। वर्तमान समय में विभिन्न अवधारणाओं की परिभाषाएं गलत है जिसके कारण सामाजिक अव्यवस्था विद्यमान है। प्रचलित विकृत परिभाषाओं में स्वराज, संविधान, मूल अधिकार, अपराध आदि प्रमुख है। उदाहरण के लिए हमारी कानून व्यवस्था में अपराध और अनैतिक के बीच कोई भेद नहीं है। अपराध की परिभाषा हमारी दंड संहिता में गलत है। अपराध उस कर्म को कहते हैं जिसमें किसी के मौलिक अधिकारों का हनन होता है। वहीं दूसरी ओर अनैतिक वे कर्म है जिसमें सामाजिक या नैतिक मूल्यों की अवहेलना हो। भारतीय दंड संहिता मे अनैतिक या असामाजिक कार्य को भी अपराध की सूची में डाल दिया गया है।

किसी भी समाज को संचालित करने के लिए दो तरीके अपनाए जाते हैं। पहला तरीका है सकारात्मक और दूसरा है नकारात्मक। सकारात्मक दिशा में चार तरीके हैं जिनमे प्रशंसा, समर्थन, सहयोग और सहभागिता हैं। वर्तमान शासन व्यवस्था को देखकर हम यह कह सकते हैं कि हमें इसमें भागीदारी नहीं करनी चाहिए। परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार समर्थन और सहयोग कर सकते हैं। वर्तमान शासन व्यवस्था समस्याओं का समाधान करने में नाकाम दिख रही है। राज्य प्रबंधक की भूमिका निभाने को तैयार नहीं है। राज्य समाज का मालिक बन बैठा है। अतः हमें समर्थन और सहयोग की ही नीति अपनानी पड़ेगी।

हमारे मार्गदर्शक बजरंग मुनि जी ने वैचारिक संतुलनवादी हिंदुत्व की बात की। उन्होंने हिंदुत्व को सही मायने में परिभाषित किया और परिभाषित करने की आवश्यकता पर बल दिया। सावरकर के हिंदुत्व को त्याग कर गांधी के समन्वयवादी हिंदुत्व की वकालत की। इसके अलावा मोहन भागवत और नरेंद्र मोदी की नीतियों को सही ठहराया। चर्चा के उपरांत यह बात समझ में आई कि परिभाषा और अवधारणा का सही होना कितना जरूरी है! साथ ही हिंदुत्व की परिभाषा पर भी बात हुई।

दिनांक 16. 9. 2025 को आयोजित ज़ूम चर्चा कार्यक्रम में 'वैचारिक परिभाषाएं' विषय पर चर्चा हुई। चर्चा के दौरान इससे जुड़े विभिन्न पहलुओं पर बात की गई।

विचारक और मार्गदर्शक का किसी भी समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इनके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष और दी गई परिभाषा के अनुसार ही समाज अपनी दिशा और दशा तय करता है। विचारकों के द्वारा निकाल गए निष्कर्ष यथार्थ होते हैं और जब इन्हें समाज लंबे समय तक लगातार आचरण में लाता है तो परंपरा का रूप लेते है। उदाहरण के लिए हमारे यहां गोत्र से बाहर विवाह की परंपरा है। गोत्र से बाहर विवाह करने का कारण वैज्ञानिक है जिसे मार्गदर्शकों ने यथार्थ के रूप में समाज के सामने रखा। इसी यथार्थ निष्कर्ष को समाज ने लंबे समय तक आचरण मे लाया जिसने परंपरा का रूप ले लिया।

सुख और दुख मानव जीवन का अभिन्न पहलू है। इच्छाओं की पूर्ति सुख है और इच्छाओं की अनापूर्ति दुख। इस बात को हम इस तरह से भी समझ सकते हैं कि कार्य के परिणाम की संभावना और यथार्थ के बीच का अंतर ही सुख या दुख होता है। उदाहरण के लिए हम किसी परीक्षा में बैठते हैं। हमारी अपेक्षा रहती है कि परिणाम बहुत अच्छा आये लेकिन किसी वजह से हमारे अनुकूल परिणाम नहीं आते। इस कारण हमें दुख होता है। यहां पर परिणाम की संभावना और यथार्थ के बीच का अंतर स्पष्ट है। सुख और दुख की उत्पत्ति हमारे मन से होती है। हर व्यक्ति को परिणाम का यथार्थवादी आकलन करने की आदत डालनी चाहिए।

सिद्धांत और व्यवहार का संतुलन ही आदर्श व्यवस्था और नीति तय कर सकता है। नीतियां ऐसी होनी चाहिए जिसमें सिद्धांत के साथ-साथ व्यावहारिकता का भी समावेश हो। कोई भी नीति कितने ही उच्च सिद्धांत पर आधारित हो अगर व्यावहारिक नहीं है तो उसका असफल होना निश्चित है।

भारतीय जीवन पद्धति में विचारक सामाजिक विषयों पर अनुसंधान करते हैं और निष्कर्ष को भावना प्रधान लोगों तक पहुंचाते हैं। यह देखा गया है कि बुद्धि प्रदान लोगों की अपेक्षा समाज में भावना प्रधान अधिक है। दूसरे शब्दों में कहे तो संचालक की अपेक्षा संचालित की संख्या अधिक है। बुद्धिप्रधान यानी विचारक किसी निष्कर्ष तक पहुंचकर भावना प्रधान लोगों तक पहुंचाते हैं जो उनके लिए कर्तव्य बन जाता है।

संस्थागत समाचार-

मां संस्थान की स्वराज यात्रा: धनारी (बदायूं) में ज्ञान यज्ञ शिविर का सफल आयोजन

धनारी, बदायूं, 11 सितंबर 2025: मां संस्थान की स्वराज यात्रा के तहत आज दिनांक 11 सितंबर 2025 को बदायूं जिले के धनारी गांव में बहादुर सिंह मास्टर साहब के मार्गदर्शन में एक ज्ञान यज्ञ शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर में आसपास के लगभग 30 किलोमीटर क्षेत्र से आए जागरूक और विद्वान साथियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

शिविर में लोक स्वराज मंच दिल्ली के प्रमुख आदरणीय नरेंद्र भाई ने मां संस्थान की ज्ञान केंद्र योजना के अंतर्गत व्यवस्था परिवर्तन के तीन आयामों- संवैधानिक व्यवस्था परिवर्तन, सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन, वैचारिक व्यवस्था परिवर्तन - पर विस्तार से चर्चा की। मध्याह्न भोजन और 50 लोगों के साथ यह विचार-विमर्श कार्यक्रम तीन घंटे से अधिक समय तक चला, जिसमें उपस्थित लोगों ने गहन रुचि दिखाई।

शिविर में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले श्री ऋषि पाल सिंह यादव ने ज्ञान केंद्र योजना को गति प्रदान करने के लिए 20 से अधिक ज्ञान केंद्रों की स्थापना का प्रस्ताव रखा। इसके अतिरिक्त, उन्होंने जनवरी 2026 में एकदिवसीय कार्यशाला आयोजित करने का सुझाव दिया, जिसे सभी शिविरार्थियों ने करतल ध्वनि के साथ स्वीकार किया।

शिविर में साध्वी प्रज्ञा साधना जी और अन्य साथियों के उत्साहवर्धक उद्बोधनों ने उपस्थित लोगों में नई ऊर्जा का संचार किया।

स्वराज यात्रा का अगला पड़ाव कल, 12 सितंबर 2025 को मदनपाल आर्य जी के सहयोग से स्थापित होने वाले नए ज्ञान केंद्र की ओर बढ़ेगा। यह यात्रा मां संस्थान के उद्देश्यों को जन-जन तक पहुंचाने और सामाजिक जागरूकता को बढ़ावा देने के लिए निरंतर प्रयासरत है।

गतांक से आगे-...

~ जीवन पथ ~

(अंक 476 में अपने पढ़ा कि विवेक और आदित्य दोनों मित्र व्यवस्था के सिद्धांत और राज्य की भूमिका के सन्दर्भ में संविधान की भूमिका पर विमर्श कर रहे है अब आगे...)

कोई माता-पिता, पुत्र के रूप में जन्मी अपनी सन्तान का नाम नरेन्द्र रखते हैं। नरेन्द्र शब्द अपने आप में व्याकरण का बडा ही उत्तम प्रकरण है। इसका अक्षर विन्यास बहुत विशिष्ट है। यह शब्द जिस अर्थ को प्रकट करता है वह किसी भी वस्तुस्थिति को चरित्र की पराकाष्ठा तक ले जाता है। किसी वस्तुस्थिति का चरित्र केवल उसके धर्मपालन, केवल उसके कर्तव्यपालन, केवल उसकी इच्छा, केवल उसकी कार्य करने की क्षमता, केवल उसके अनुशासित रहने तथा केवल उसके कार्य के प्रति बाध्यकारी होने से निर्मित नहीं होता है बल्कि उस वस्तुस्थिति का चरित्र निर्माण इन तमाम गुणात्मक परिस्थितियों के समायोजन का परिणाम होता है। जो व्यक्ति इन तमाम गुणों का जिस स्तर से पालन करता है उसका चरित्र उतना ही उत्कृष्ट होता है। 'नरेन्द्र' शब्द का अक्षर विन्यास इस शब्द के ऐसे ही उत्कृष्ट चरित्र की परिकल्पना प्रस्तुत करता है। अब यदि 'नरेन्द्र' नाम को धारण करने वाले व्यक्ति का चरित्र इतना विशिष्ट नहीं होता है तो क्या ऐसा होने से नरेन्द्र शब्द का मूल अर्थ अपने चरित्र को खो देगा? नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। यद्यपि माता-पिता की इच्छा यही होगी कि उनकी संतति 'नरेन्द्र' शब्द के मूल चरित्र को ही अपने कर्तृत्व के रूप में अंगिकार करे। इस परिस्थिति में मूल प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि 'नरेन्द्र' नाम के व्यक्ति का कर्तृत्व क्या है? वह स्वयं को समाज के सामने किस प्रकार प्रस्तुत करता है। उसकी आन्तरिक विचारवस्तु क्या है? जिससे मार्गदर्शन पाकर उसे समाज के सामने अपने कर्तृत्व का प्रमाण प्रस्तुत करना है, तदउपरान्त जिसके आधार पर उसका चरित्र निर्मित होता है। ....वह क्षण भर के लिए चुप होकर पुनः बोलता है- संविधान शब्द का अक्षर विन्यास भी इतना ही उच्चकोटि का है। लेकिन किसी व्यवस्था के लिए निर्धारित किए गए प्रावधान भी क्या संविधान की आन्तरिक विषय-वस्तु बनने की योग्यता रखते हैं या नहीं, इस तथ्य को समझना बहुत आवश्यक है। संविधान शब्द की आन्तरिक विषय-वस्तु समाज की आवश्यकता के अनुसार स्थापित होनी चाहिए। यह राजनेताओं की बफौति नहीं होती। समाज का राजनीतिक प्रतिनिधित्व करने वाले लोगों को तो इसका प्रारूप तैयार करने की कतई छूट नहीं होनी चाहिए। भारत के संविधान का यह मूल दोष है। हमे इस तथ्य पर विचार करना चाहिए।

क्या इस विषय में भी तेरे पास कोई उदाहरण होगा? विभिन्न विषयों की ठीक परिभाषा के अभाव में समाज के

परिवेश में व्याप्त समस्याओं का समाधान करने का ढंग, भारत के संविधान की असफलता का अति महत्वपूर्ण कारण है।

वह क्या है? यह कई बार सामाजिक समस्याओं का आर्थिक व राजनीतिक समाधान करने का प्रयास करता है। ऐसे ही आर्थिक समस्याओं का सामाजिक व राजनीतिक समाधान करने का प्रयास करता है तथा इसी प्रकार राजनीतिक समस्याओं का आर्थिक व सामाजिक समाधान करने का प्रयास करता है। यह बडी विचित्र स्थिति है। इससे समाज भ्रम में पड जाता है और राजनीति को समाज पर अपनी मूल इच्छा अर्थात शासन स्थापित करने का अवसर प्राप्त हो जाता है। राजनीति की इसी इच्छा ने समाज की लोकतन्त्रीय व्यवस्था को भी शासन की विधा के रूप में परिवर्तित कर दिया है। आज राजनीति, सामाजिक व्यवस्था को कानून के माध्यम से चलाना चाहती है। यह शक्ति केन्द्रीयकरण करने का बड़ा ही सरल उपाय है। इससे राज्य केवल राजनीतिक स्वार्थ-साधना कर पाता है। इस परिस्थिति में कानून जनहित के उद्देश्य को ढाल बनाकर बनाए जाते हैं और जनसमुदाय सदैव समस्याओं से ग्रस्त रहता है। क्या इस प्रश्न का कभी कोई उत्तर खोजा जाएगा? भारत का संविधान अत्यधिक आदर्श सिद्धान्तों की गौरव-गाथा (उदाहरण के लिए देखें अनुच्छेद 51 क) के जैसा है लेकिन समाज में समस्याएं कम नहीं होती, यह गम्भीर चिन्तन का विषय है। संविधान शब्द के अर्थ के अनुसार इसमें समाविष्ट विषय-वस्तु के निर्देशों का पालन करना राज्य के लिए बाध्यकारी होता है समाज के लिए नहीं। क्योंकि संविधान के द्वारा समाज, राज्य के अधिकारों और कार्यो की सीमा तय करता है। वर्तमान परिस्थिति में तो भारतीय संविधान के अनुच्छेद '51 क' के अनुसार समाज को राज्य का आज्ञाकारी बनना ही पडेगा। मैं यहाँ पर विषय को प्रश्नों के आमन्त्रण के लिए खुला छोड रहा हूँ और मौजूदा संविधान के पैरोकारों को यह चेतावनी दे रहा हूँ कि संविधान समाज का हितोपदेशक नहीं होता है। संविधान की विषय वस्तु के सन्दर्भ में यहाँ पर उपरोक्त प्रसंग को इस प्रकार प्रस्तुत करने से मेरा आशय यह है कि हमारे संविधान की विषय-वस्तु में संविधान, समाज, धर्म व राज्य जैसे अति महत्वपूर्ण विषयों की मूल परिभाषा के आधार पर न तो इन विषयों की विवेचना की गयी है और न इनके मानक के अनुसार संविधान की विषय वस्तु निर्धारित की गयी है।

तेरा यह स्पष्टीकरण तो भ्रम की स्थिति पैदा करता है विवेक! इसे सुनकर तो ऐसा लगता है कि भारत का संविधान देश में व्यवस्था की स्थापना का कारण नहीं बल्कि समाज में समस्याओं के उन्मूलन के नाम पर अनुपयोगी विधियों का सृजनकर्ता है। इस विषय में तेरा क्या स्पष्टीकरण है?